# पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म लगते असौज तीज सन् 1942 में ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद, जनपद गाजियाबाद (पहले मेरठ) उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री नानक चन्द और माता जी का नाम श्रीमती सोना देवी था। लगभग दो मास की अवस्था में श्वासन में लेटने से ही कुछ समय के उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर अज्ञानतावश उपचार प्रारम्भ हो गया। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं और आयु बढ़ने के साथ-साथ मन्त्र-पाठ और प्रवचन स्पष्ट सुनाई देने लगा। छः वर्ष की आयु में इन्हें भयानक चेचक निकली जो इनके मुख-मण्डल पर अपनी स्मृति छोड़ गई।

सात वर्ष की अल्पायु में ही इनके पिताश्री ने अपने गाँव में ही पशुओं व कृषि के कार्य के लिए नौकर रख दिया। धीरे-धीरे इनके प्रवचनों की क्रिया को मनोरंजन व कौतुक का साधन बनाया जाने लगा। एक दिवस प्रवचन की प्रक्रिया के पश्चात् अत्याधिक पिटाई के कारण लगभग 15 वर्ष की अवस्था में भीषण परिस्थितियों में मध्य रात्रि में गृह को त्यागकर विचरण करते हुए अपनी कर्मभूमि बरनावा जा पहुँचे वहाँ पर आप योग मुद्रा में समाधिस्थ होकर प्रवचन करने लगे, जिसकी सुगन्धी आस-पास में तीव्रता से फैल गई। आपने अपने प्रवचनों के माध्यम से वेद ब्रह्म पारायण यज्ञों का आयोजन करना शुरु कर दिया। जन-समूह के अथाह प्रेम व सहयोग से बरनावा लाक्षागृह पर पाँच यज्ञशालाएँ, महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, आश्रम व गऊशाला की स्थापना की, जिसका प्रबन्ध उनके द्वारा स्थापित श्री गाँधी धाम समिति की देखरेख में होता है।

पूज्यपाद गुरुदेव 28 दिसम्बर 1961 में पहली बार दिल्ली प्रवचन के लिए आए। अथाह ज्ञान के भण्डार, आध्यात्मिक जगत की महान् व अद्‌भुत विभूति के प्रवचन सुनने के पश्चात् प्रवचनों को टेप करने का निर्णय लिया गया और कुछ समय के उपरान्त प्रवचनों को टेप करके प्रकाशित करने के लिए पूज्यपाद गुरुदेव की संरक्षकता में वैदिक अनुसन्धान समिति का दिल्ली में गठन हो गया। जन्म जन्मान्तरों के शृङ्गी ऋषि की पुण्य आत्मा ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज इस अज्ञानता के युग में वैदिक संस्कृति का पुनः से उत्थान करने के लिए जीवनपर्यन्त लगे रहे। ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान के द्वारा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान को अपने जीवन में कितना साकार किया है उसकी अथाह चरमसीमा इनके प्रवचनों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इस अथाह ज्ञान को मानवता के लिए आचरण व व्यवहार में लाने का सरल व श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित किया है और साहित्य की गुत्थियाँ स्पष्ट की हैं। जिससे मानव अपना व जनसाधारण का कल्याण करते हुए इस भव सागर से पार हो सकता है।

यह दिव्य आत्मा 15 अक्टूबर 1992 को पचास वर्ष की अवस्था में ब्रह्ममूहुर्त के समय अपने लोकों को गमन कर गई। **–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

॥ ओ३म् ॥

# प्रभु से विनय

हे देव! हे सखा! हे मित्र! तू इस संसाररूपी राष्ट्र का स्वामी है। इस राष्ट्र को शान्तिदायक, महान् और ऊँचा बना। विधाता! यही नहीं, हम संसाररूपी राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। हम सबसे पूर्व यह चाहते हैं कि जो हमारा हृदयरूपी राष्ट्र है यह हर प्रकार से ऊँचा बना रहे। यह हमारी हृदयरूपी जो अयोध्या है इसमें वह राम विराजमान रहें, जिस राम राज्य के ऊपर संसार व्याकुल होता चला जा रहा है। हे विधाता! आज हम शरीर में वह अयोध्या चाहते हैं जिसमें राम राज्य हो जाये। हमारी यह अयोध्यारूपी नगरी ऊँचा बन जाये और वह विधाता, इस नगरी में ओत-प्रोत हो जाये। वह विधाता, इस राष्ट्र का स्वामी बन जाये।

हे विधाता! आज हम उस राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं जिस राष्ट्र में हमारा जन्म हो, जो राष्ट्र हमारे शरीर का एक ऊँचा भाग हो। कैसे बनाएँगे, विधाता? जब तक आपकी करूणा नहीं होगी, विधाता! आपकी दी हुई प्रेरणा हमें नहीं मिलेगी। तब तक हम इस संसार का, अपने शरीर रूपी राष्ट्र का उत्थान किसी भी प्रकार नहीं कर सकते, न ही इसका निर्माण अच्छी प्रकार कर सकते हैं।

प्रभु! हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते, संसार का कल्याण चाहते हैं। जब संसार में रहने वाले प्राणियों का हृदय, अयोध्या के तुल्य बन जायेगा, राम राज्य सबके हृदय में रमण कर जायेगा, उस काल में शान्ति का प्रदर्शन हो जायेगा।

विधाता! आज हम भी अपना प्रदर्शन कर रहे हैं। हम भी अशान्ति में हैं। हमें शान्ति नहीं मिल रही है।

**पूज्यपाद-गुरुदेव**

अंक : 587 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 662
वर्ष : 50 44 समग्र वर्ष : 56

# अनुक्रम


| क्रम संख्या | विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. प्रभु से विनय | पूज्यपाद-गुरुदेव | 3 |
| 2. अनुक्रम | | 4 |
| 3. अनुसन्धान ही जीवन | पूज्यपाद-गुरुदेव | 5-18 |
| 4. प्रभु की चेतना में रमण करने की प्रेरणा | पूज्यपाद-गुरुदेव | 19-35 |
| 5. ऋषियों के उद्‌गार | | 36 |
| 6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि | | 37-42 |


## नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को निरन्तर प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)** PAN No. – AAAAV7866J
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. 0149000100229389, IFS Code - PUNB 0014900

**शृङ्गीऋषि वेबसाईट**

**Website : www.shringirishi.in**
**Email : contact@shringirishi.in**

॥ ओ३म् ॥

# अनुसन्धान ही जीवन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का पठन-पाठन कर रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ प्रायः वेद मन्त्रों का सुन्दर जो क्रमबद्ध प्रारम्भ हो रहा है, वास्तव में जब हम यह विचार-विनिमय करते हैं, कि वेदों के ज्ञान पर अनुसन्धान करना चाहिये, वेदों में कितना ज्ञान है, कितना विज्ञान है और अनुसन्धान करने के लिये तत्पर भी हो जाते हैं। परन्तु जब अनुसन्धान की पवित्र वेदी पर, जब हम विराजमान होते हैं तो हमें कुछ ऐसा प्रतीत होने लगता है कि हम इस ज्ञान और विज्ञान पर अनुसन्धान करें। संसार में बेटा! **वेदों में प्रकृति का सुन्दर ज्ञान विज्ञान है।** परमपिता परमात्मा जो ऋत की भाँति जो इसमें रमण कर रहा है, उस ब्रह्म की अलौकिकता का वर्णन आता रहता है। **केवल वेद में ज्ञान और विज्ञान से परिपक्व है, जितना भी कर्मकाण्ड है, वह सब प्रकृति से सम्बन्धित है, परन्तु उस कर्मकाण्ड में जितनी चेतना है, वह ब्रह्म से सम्बन्धित है।**

## ब्रह्म की चेतना

अब अनुसन्धान की वेदी पर पहुँचने के लिये जब तत्पर होते हैं तो विचार यह आता है कि हम चेतना के ऊपर अनुसन्धान करें या जो अचैतन्य वस्तु है, उसके ऊपर अनुसन्धान किया जाये। क्योंकि हमारे यहाँ महर्षि वायु जी ने बहुत सुन्दर शब्दों में कहा है–आदित्य जी महाराज एक समय विराजमान थे, आदित्य जी ने महर्षि वायु जी से यह कहा कि तुम ब्रह्म को क्या स्वीकार करते हो, तो महर्षि वायु जी ने यह कहा कि ब्रह्म को मैं सन्निधान मात्र से स्वीकार करता हूँ। और महर्षि वायु जी ने प्रश्न किया आदित्य जी से कि महाराज! आप? तो महर्षि आदित्य जी ने यह कहा कि ब्रह्म की चेतना को कैसा अनुभव करते हैं, वास्तव

में मैं भी अन्त में सन्निधान मात्र से स्वीकार करता हूँ। परन्तु विचार-विनिमय यह करना है, प्रकृति का क्षेत्र कितना है, और जितना भी क्षेत्र प्रकृति का है उस प्रकृति में शून्यता है। परन्तु उसमें जो चैतन्य और उसमें जो क्रिया है अथवा उसमें जो चेतना है, वह ब्रह्म की है, अब दोनों का सन्निधान होना प्रारम्भ हो जाता है। परन्तु इसमें कितनी शाखाएँ होती हैं, कितना इसमें विज्ञान है, क्या राष्ट्र के सम्बन्ध में क्या-क्या है। मानव शरीर में मन है, यह भी प्रकृति से ही सम्बन्धित है, परन्तु विचार आता है कि मन में चेतना कहाँ से आई, वह चेतना हम किसकी स्वीकार करेंगे, परन्तु वह प्रकृति के सन्निधान मात्र से ब्रह्म की चेतना स्वीकार करना हमारे लिये अनिवार्य हो जाता रहा है। यह वाक्य अब यह प्राण की चेतना है, मानो प्राण अपनी गति कर रहा है, इसमें जो कम्पन्नता हो रही है, वह भी उसको हम प्रकृति की स्वीकार करते हैं तो उसी में हमें देखो, कुछ वाक्य सुन्दर प्रतीत नहीं होता। मानो वह भी चेतना ब्रह्म की ही स्वीकार करना हमारे लिये योग्य होता है। आगे चल करके जब हम और भी अनुसन्धान करने लगते हैं, कि हम मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार का, जैसे मन है, परन्तु बुद्धि में जो चेतना आती है, बुद्धि में जो एक विभाजन करने की अथवा उसमें विचार-विनिमय करने की जो सत्ता आती है, उसका भी मूल कारण हमें ब्रह्म ही प्रतीत होता है, परन्तु बुद्धि के लिये नाना प्रकार की धाराएँ, दूसरी धारा प्रारम्भ हो जाती है, कहीं देखो, ये बुद्धि बन करके रहती है, जहाँ आगे चल करके मेधा, ऋतम्भरा, और प्रज्ञावी बन करके कार्य करती है। परन्तु इसके भी नाना प्रकार के भेदन माने गये हैं।

## चित्त में संस्कारों की गति

अब उसके पश्चात् चित्त है जिसमें जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार विराजमान रहते हैं। वह संस्कार जब चित्त में विराजमान होते हैं–हमारे आचार्यों ने तो यहाँ तक कहा है कि मानव के चित्त में, मानव के करोड़ों-करोड़ों जन्मों के संस्कार विराजमान होते हैं। परन्तु इसके ऊपर अनुसन्धान किया जाये–एक मानव है, परन्तु उसके सूक्ष्म से चित्त में, एक मानव सर्वत्र राष्ट्र में भ्रमण कर लेता है।

परन्तु राष्ट्र का भ्रमण करता हुआ, वह द्वितीय राष्ट्रों में जाता है, भूमण्डल का भ्रमण कर लेता है, चन्द्रमा की यात्रा कर लेता है, मङ्गल की यात्रा कर लेता है, मानो शुक्र इत्यादि बुध की यात्रा में परणित हो जाता है। वहाँ के प्राणी मात्र को दृष्टिपात कर लेता है, अब चित्त में वह संस्कार, मानो वह संस्कार चित्त में विराजमान हो जाते हैं, अब हम विचारते हैं, कि हमारे राष्ट्र का कितना क्षेत्रफल है। तो मुनिवरो! देखो, **वही चित्त में, वही तरङ्गें उत्पन्न होकर के, मानव के मस्तिष्क में आ जाती हैं, और वाणी से उच्चारण करने लगता है।** मानो यह कितना ऊँचा अनुसन्धान है, क्या इसके ऊपर विचार-विनिमय प्रत्येक मानव को करना चाहिये। इसके पश्चात् हम चित्त का अनुसन्धान जब हम करेंगे, तो हमें यह प्रतीत होगा, क्या यह जो सर्वत्र प्रकृति है, जितना भी प्रकृतिवाद है, इसमें जितना परमाणुवाद है, यह भी एक चित्त की भाँति अपना कार्य करता चला जा रहा है। परन्तु एक राष्ट्रवेत्ता है, राष्ट्र में धिराज बन जाता है, वह राष्ट्र के, अपने राष्ट्र के लिये विचार-विनिमय करता है। परन्तु वह दूसरे राष्ट्र का भ्रमण करता है, दूसरे राष्ट्र वाले जब प्रश्न करते हैं, तो उन वाक्यों को उनके समीप नहीं नियुक्त कर सकता जिससे अपने राष्ट्र की हानि हो जाये। तो वह यह जानता है कि क्योंकि उसके मस्तिष्क में वो सब उसके चित्त में अवृत हैं, व्यापकवाद से ही वह चित्तदर्शिता उसके चित्तवाद में होती है, इसीलिये बेटा! देखो, वह उन वाक्यों को नहीं पान करता।

## अनुसन्धान करने की प्रेरणा

अब एक मानव है, परन्तु वह संर्कीणता से विचार-विनिमय करता है। संर्कीणता जितनी मानव के मस्तिष्क में होती है उतनी मानो देखो, प्रकृति में, प्रकृति का एक गुण है, जिसको हम आकुञ्चन भी कहते हैं। आकुञ्चन गुण भी प्रकृति का है, क्योंकि यदि प्रकृति में आकुञ्चनवाद नहीं होगा, तो मुनिवरो! देखो, माता के गर्भस्थल से बालक भी उत्पन्न नहीं हो सकता। हम जैसे भी उत्पन्न नहीं हो सकते। क्योंकि वास्तव में हम माता के गर्भ में आते हैं, उसके, माता के गर्भ में पनपते रहते हैं, पनपने के पश्चात् पृथक् हो जाते हैं, पृथक् हो

जाने के पश्चात् मानो देखो, हममें व्यापकवाद आना प्रारम्भ हो जाता है। बुद्धि का विकास होने लगता है। चित्त के जो संस्कार हैं, उनमें उद्बुद्धता होने लगती है, परन्तु देखो, जिस पर अनुसन्धान भी किया जाता है। यदि हम चित्त के संस्कारों पर अनुसन्धान करेंगे, तो हमें यह प्रतीत होगा कि वास्तव में अनुसन्धान है क्या, हम अनुसन्धान किसको कहते हैं, हम प्रकृति का अनुसन्धान करें, ब्रह्म में जो प्रकृति में चेतना है, उसके ऊपर अनुसन्धान करें, परन्तु देखो, **मानव का जीवन तो ऐसा प्रतीत होता है, क्या इसके जीवन में तो अनुसन्धान ही अनुसन्धान है, और करना चाहिये।** कहीं राष्ट्र का अनुसन्धान है, आगे राजा है, परन्तु किसी राजा को, किसी प्राणी को देखो, किसी प्रकार का राष्ट्र अन्नाद सुन्दर लगता है, किसी को किसी प्रकार का सुन्दर प्रतीत होता है। परन्तु कोई यह कहता है, क्या सब अपने-अपने अधिकार में सीमित होने चाहिये। कोई यह कहता है कि नहीं, इसमें प्रसन्नता आनी चाहिये, तो **विचार यह होना चाहिये कि हम वास्तव में अपने विचारों पर कितने सुन्दर बनें। कितनी हममें व्यापकता आनी चाहिये, हम राष्ट्रवाद को कैसा बनाना चाहते हैं,** तो यह सब प्रजा के जो विचार, जब राजा तक पहुँचेंगे, तो राजा उनको स्वीकार करेगा। परन्तु स्वयं राजा को यह विचार-विनिमय करना है, कि हमें, स्वयं कैसा बनना है? परन्तु जब वह अनुसन्धान करेगा, क्या तेरे ऊपर ही सर्वत्र प्रजा का जीवन न्यौछावर है। क्योंकि प्रजा तेरे ही निर्धारित किये हुए आङ्गन में रहती है अब तुझे कैसा बनना है परन्तु यह बड़ा महान् एक सब अनुसन्धान है, जिसके ऊपर मानव को सदैव विचार-विनिमय करने की, सदैव आवश्यकता रहती है।

मेरे प्यारे महानन्द जी यह कहा करते हैं। आधुनिक काल की चर्चा अधिक प्रगट करने लगते हैं। परन्तु जब आधुनिक काल की चर्चा आने लगती है, तो यहाँ हमें ऐसा प्रतीत होता है, परमाणुओं से भी ऐसा प्रतीत होता है, वायु मण्डल से ऐसा प्रतीत होता है कि संसार में अराजकता का प्रसारण होता चला जा रहा है। परन्तु जब यह प्रतीत होता है परन्तु वह क्यों करते हैं, कुछ ऐसे भी होते हैं कि अराजकता को स्वीकार करते हैं परन्तु ये क्यों करते हैं यह एक अनुसन्धान का विषय है। परन्तु वह तो उन्हीं से यह प्रश्न किया जाये, क्या यह

तुम्हारे द्वारा ऐसे वाक्य क्यों प्रारम्भ होते हैं मानो यह कहाँ से क्यों ऐसा होता है? हमें इसके मूल कारण को विचारना इनका मूल कारण क्या है? शब्द जाता है, वास्तव में वसुन्धरा है, मन है, अस्ति प्राण है, ऐसा कौन-सा मानव के शरीर में ऐसी कौन-सी सत्ता है, जो ऐसा चाहता है कि मैं सब प्रकार से सम्पर्क रखना चाहता हूँ।

## ब्रह्म और प्रकृति को जानने का मार्ग

मेरे प्यारे! ऋषिवर वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि मानव संसार में अनुसन्धान करने के लिये आता है। आज जब वसुन्धरा के गर्भ में एक वैज्ञानिक जाता है, नाना प्रकार के खनिज पदार्थों को एकत्रित करने का उसका स्वभाव बन जाता है। माता वसुन्धरा की गोद में जा करके विराजमान हो जाता है। जब उसे देखो, एक दूसरी धातु प्राप्त होती रहती है, आती रहती है, उसके समीप, मस्तिष्क में विकासवाद आ जाता है। अन्त में वह यह कहता है कि मैं इसको नहीं जान सकता, मानो प्रकृतिवाद में कितनी तरङ्गें हैं, मैं इस प्रकार नहीं जान सकता। तो हमारे ऋषियों ने बेटा! बहुत सुन्दर कहा, बहुत ही सुन्दर कहा है कि **यदि हम ब्रह्म की चेतना को और प्रकृतिवाद को जानना चाहते हैं, तो हमें यौगिक बनना चाहिये, हमें वास्तव में यौगिक बनना चाहिये।** क्योंकि योग में जा करके मानव बेटा! महान् और शान्त हो जाता है। उसे संसार के लिये जितना परमाणुवाद है, तरङ्गवाद है, उनसे उसकी तृप्ति हो जाती है, क्योंकि यह प्राण और मन की चेतना जो संसार में प्रतीत होती है। मानो ब्रह्म की प्रकृति की देखो, प्रकृति की दृढ़ता और ब्रह्म की चेतना हमें प्रतीत होती है, उस चेतना को, दृढ़ता को दोनों को उसका अधिपथ्य हो जाता है, और वह चेतना में जब पहुँच जाता है, तो जड़ता से उसका स्वयं अधिकार हो जाता है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर और जहाँ मानव की जड़ता से अधिकार हुआ, परन्तु जड़ता के अधिकार होने के पश्चात् ही मानव जड़ता के आङ्गन में नहीं आना चाहता। वह स्वयं चेतना में रहना चाहता है, और **चेतनित के द्वारा जब चेतनित हो जाता है तो बेटा! देखो, यह प्रकृति उसके स्वयं आधीन हो जाती है।** अब प्रकृति

में जितना विज्ञान है, वह चाहे चन्द्र मण्डल का हो, अथवा शुक्र का हो, बुध का हो, किसी भी लोक-लोकान्तर का हो, उसको जानने में वह सब प्रकाश स्तम्भ हो जाता है। क्योंकि वह चेतना सर्वत्र है, जो सर्वत्र चेतना है, उस चेतना को उसने जान लिया है। जो ब्रह्म की सर्वत्र चेतना को जान लेता है, बेटा! वह इसका अधिपथ्य कर ही लेता है। क्योंकि **आत्मा संसार में महान् और सूक्ष्म है,** सूक्ष्म होने के नाते बेटा! उसको प्रकृति व्याप्ति नहीं है इस प्रकार से। क्योंकि प्रकृति जब इस प्रकार नहीं व्याप्ति, उसको लोक-लोकान्तर भी नहीं व्यापते। जैसे हमारे यहाँ ऐसा माना गया है, क्या बृहस्पति मण्डल में वायु प्रधान है, परन्तु वायु प्रधान में पार्थिव तत्त्व वाले जो शरीर जाते हैं तो बेटा! देखो, वहाँ वह जीवित नहीं रह पाएँगें, क्योंकि उनका प्राणान्त हो जायेगा। क्योंकि वहाँ केवल उनकी प्रतिभा अकृत रह सकेगी। तो इसीलिये देखो, जैसे वायुमण्डल के पार्थिकता में आ जायें तो वह पार्थिकता में जीवित नहीं रह सकेंगे। क्योंकि उनका जीना, हम तो वास्तव में स्वीकार नहीं करते, उनका जो शरीर है, वह आत्मा का जो शरीर है, परन्तु वह एक-दूसरे लोक में सुगठितता नहीं है। अब मङ्गल मण्डल के जो प्राणी हैं, वह पृथ्वी मण्डल पर जीवीत रह सकते हैं, क्योंकि पृथ्वी मण्डल के प्राणी मङ्गल मण्डल पर जीवित रह सकेंगे। क्योंकि मङ्गल में यदि पार्थिव तत्त्व प्रधान है, और इस पृथ्वी मण्डल पर भी पार्थिव तत्त्व प्रधान है। तो इसीलिये आज मैं यह उच्चारण करने आया नहीं आया, कि मैं लोक-लोकान्तरों की इच्छा प्रगट करूँ।

केवल वाक्य यह उच्चारण करना था कि जिन वाक्यों पर, सब पर अनुसन्धान करना है, और इसको अपने जीवन में लाने का प्रयास करना है। अब इनको कैसे लाया जायेगा? एक वाक्य तो हमारे ऋषि-मुनियों ने यह उच्चारण किया है, क्या **हम योग के द्वारा, इन सब पर अपना अधिपथ्य कर सकेंगे,** इससे अन्तरात्मा को शान्ति भी प्राप्त होगी, और एक **द्वितीय मार्ग यह है कि हम एक-दूसरे परमाणु को जानते रहें।**

## परमाणुवाद का विज्ञान

जब हम परमाणुवाद में जाते हैं, एक परमाणुवाद को हम जानते हैं तो

दूसरा परमाणु उसके पास विराजमान है, इसके साथ-साथ दूसरा परमाणु इससे सूक्ष्म है। जब हम उसको जानते हैं, तो उससे सूक्ष्म परमाणु उसके साथ हैं, परन्तु जब इस प्रकार उस परमाणु को, तृतीय परमाणु को जानते हैं तो चतुर्थ परमाणु, उसके साथ-साथ लगा हुआ है। परन्तु जब हम चतुर्थ परमाणु को जानते हैं, पञ्चम परमाणु उसके साथ जुड़ा हुआ है। उसके साथ लगा हुआ होने के नाते बेटा! हम पाँच प्रकार के परमाणुओं को जानते हैं, अब इसमें कुछ परमाणु हैं कुछ महापरमाणु हैं। कुछ देखो, एक-दूसरे से सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु होते हैं मानो देखो, उन परमाणुओं में भी सूक्ष्मवाद है जैसे मुनिवरो! देखो, वायु के परमाणु हैं, वायु के परमाणु लगभग मुनिवरो! देखो, लगभग देखो, साठ हजार प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म होते चले गये हैं। एक स्थूल है, उससे सूक्ष्म से सूक्ष्म तो साठ हजार तक बेटा! देखो, उसकी सूक्ष्मता मानी है। अब देखो, जैसे हमारे यहाँ अग्नि के परमाणु हैं, अग्नि के परमाणु हैं देखो, एक अग्नि का परमाणु देखो, जो गृहपत्य नाम की अग्नि है, वह देखो, माता अपने गृह में प्रविष्ट करती है, उसकी प्रतिष्ठा करती है। एक अग्नि यज्ञशाला में प्रविष्ट होती है, मानो देखो, यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त होती है, अब यज्ञशाला में जो अग्नि हम प्रदीप्त करते हैं सामग्री उसमें अर्पित करते हैं, जितने प्रकार की सुगन्धिदायक औषधियाँ होंगी, वनस्पतियाँ होंगी, उतने ही प्रकार की सूक्ष्मवाद का बेटा! उनमें होती चली जाती हैं। ऐसा हमारे यहाँ यद्यपि विशेषज्ञवेत्ताओं ने स्वीकार किया है क्या जब यजमान यज्ञ करता है और यजमान की जो भावना है, परन्तु वह **यजमान की भावना में, एक अरब प्रकार के परमाणु प्रत्येक स्वाहा के साथ में उत्पन्न होते रहते हैं।** मानो वह जो परमाणु हैं, जो प्राण के द्वारा उत्पन्न होते हैं, जो हमने जल, अन्न इत्यादि वनस्पतियाँ पान की हैं, उनके तो परमाणु बनेंगे। परन्तु उनमें कितने प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म होते चले जाते हैं, तो बेटा! कितना महान् यह अनुसन्धान है।

विचार-विनिमय करना है, आगे यह उच्चारण करने जा रहा था, कि वह जो जितनी वनस्पतियाँ हम अग्नि में परणित करते हैं। अब अग्नि प्रत्येक औषधि को ले करके, प्रत्येक औषधि के साठ प्रकार के सूक्ष्म परमाणु बना देती

है। और वह औषधियों में किसी में मानो देखो, पार्थिव तत्त्व की अधिकता है, किसी में अग्नि की प्रधानता है। जैसे समिधा है, चन्दन में, मानो जितनी सुगन्धि होती है, अहा! **चन्दन में अग्नि की प्रधानता है,** क्योंकि उसमें प्रतिभा है, इस प्रकार देखो, जैसे पीपल का वृक्ष है, पीपल के वृक्ष में मुनिवरो! देखो, उसमें आकुञ्चन करने की बहुत शक्ति होती है। इसीलिये **पीपल का वृक्ष हमारे यहाँ देखो, यज्ञशाला में महासृष्ट स्वीकार किया गया है।** आगे चल करके देखो, जैसे वट वृक्ष है, वट वृक्ष की समिधाओं में लगभग मुनिवरो! देखो, एक समिधा को जब हम अग्नि में प्रदीप्त कर देते हैं उससे वायु तत्त्व की और कृतिभा की जैसे मानो हम पार्थिवता और वायुता की दोनों की प्रधानता हम स्वीकार करते हैं उसमें, मानो देखो, जब अग्नि से वह सुगन्धि देती है, तो उसमें से लगभग निन्यानवें प्रकार के परमाणुओं की उत्पत्ति होने लगती है। तो इसी प्रकार से एक-एक को लेकर के यह अग्नि जब सूक्ष्म परमाणु बनाती है, वह सूक्ष्म अब अग्नि के कितने परमाणु हैं, कितने प्रकार के परमाणु उत्पन्न होते हैं, अब एक-दूसरे परमाणु में गति जानने लगोंगे।

## विज्ञान का मार्ग

जानते रहोंगे तो एक-दूसरे यन्त्र का भी तुम विकास करते रहोंगे, और देखो, वायु तत्त्व प्रधानता का तुम्हें यन्त्र बनाना है। तो उसमें वायु के परमाणुओं को तुम्हें निकासना होगा, अब उनका अनुसन्धान करना होगा। कैसे निकासा जाये यह बेटा! मस्तिष्क में उसको विचारा जाये, मस्तिष्क में विचार करके, उन धातुओं को वसुन्धरा से लिया जाये, वसुन्धरा से जब वह धातु ली जाती है। मानो देखो, एक दूसरी धातु का मिलान करते हैं, तो वह धातु वह जो परमाणु भ्रमण कर रहे हैं तत्त्व में, तत्त्व प्रधानता में बेटा! वह इसके साथ-साथ इनका मिलान होता है और वह एक दूसरी वसुन्धरा की हम धातुओं के एक-दूसरे से मिलान करते हैं, मिलान करके बेटा! वह परमाणु स्वयं सुगठित हो जाते हैं, अब वह परमाणु सुगठित हो जाते हैं उनमें **व्यापकवाद प्रकृति का स्वाभाविक गुण होता है।** क्योंकि देखो, **वायु में व्यापकवाद है, अग्नि में प्रसारण शक्ति**

**अधिक होती है,** अब ऐसे उन परमाणुओं को जानने से ही बेटा! हम आगे चल सकते हैं। मानो एक मार्ग यह है, कि जो हम विज्ञान का मार्ग प्राप्त करते हैं। परन्तु यह मार्ग कहाँ तक सम्बन्धित होता है यह आगे चल करके मैं उच्चारण करूँगा क्योंकि वेद का पाठ आयेगा।

## अनुसन्धान की वेदी

आज का वेद का पाठ हमारा बहुत ही सुन्दर विवेचना देता चला जा रहा था और वह विवेचना यह थी कि वास्तव में हम अनुसन्धान की पवित्र वेदी पर जाना तो चाहते हैं परन्तु दो प्रकार का अनुसन्धान मैंने अभी-अभी नियुक्त तुम्हारे समक्ष किया, क्या एक तो वह मार्ग है और एक यह परमाणुवाद का मार्ग है। परन्तु परमाणुवाद का इस प्रकार का मार्ग है ये, क्या एक परमाणु को तुम जानोंगे दूसरा तुम्हारे साथ में सुगठित है और वह चाहता है कि मुझे भी जानो। परन्तु देखो, मस्तिष्क में तो यह आ जाता है कि इसको भी जानो। परन्तु जितनी भी मनुष्य की बुद्धि सूक्ष्म होती चली जायेगी, जितना इसमें सूक्ष्मवाद और व्यापकवाद की तरङ्गें आती रहेगीं, उतना ही परमाणुवाद को हम सुगठित कर सकते हैं। आगे चल करके बेटा! देखो, इस मार्ग को हम प्राप्त करते हुए, इसमें हमें नाना प्रकार की धातु और द्रव्य इत्यादियों की आवश्यकता रहती है, स्वर्ण की आवश्यकता अधिक रहती है, क्योंकि **स्वर्ण में विद्युत अधिक होती है** और जैसे अग्नि है मानो देखो, ये अग्नि तो जिसको हमारे यहाँ यज्ञशाला में परणित की जाती है, और एक अग्नि वह है, जो अग्नि हमारे यहाँ विद्युत बन करके प्रकाश देती है, एक वह अग्नि है जो विद्युत को प्रकाशित करती है, एक वह अग्नि है, जो इनकी तरङ्गों में रमण करके, भ्रमण करती है। परन्तु कितनी प्रकार की विद्युत होती है, उस विद्युत के जो परमाणु होते हैं, वह अग्नि भी जैसे अग्नि और जल के मिलान से मानो देखो, पृथ्वी अग्नि और वायु और जल के दोनों के मिलान से इसमें जल का मिश्रण और पृथ्वी का मिश्रण करने से ही बेटा! देखो, वह स्वयं, वह अग्नि के और जिसको हम विद्युत के परमाणु सुगठित हो जाते हैं, और वह परमाणु मानो एकत्रित हो जाते हैं। इसी प्रकार बेटा! देखो, परमाणुवाद, एक दूसरी धातु को सुगठित करने से, वह

एकत्रित हो जाते हैं। हमारे यहाँ बेटा! विद्युत से भी अधिक सूक्ष्म है, ऐसी-ऐसी सूक्ष्म धातु हैं, जो विद्युत को भी निगल जाती हैं, बेटा! मानो देखो, जैसे मानव को मृत्यु निगल जाती है। इसी प्रकार विद्युत को निगलने वाली भी धातु हैं परन्तु इनको जानने के लिये वास्तव में हम उत्सुक रहें और वेद का अध्ययन करेंगे, और वेद से हम उन वस्तुओं को निकासने का प्रयास करें, तो मुनिवरो! हमें वह वस्तु प्राप्त हो सकती हैं।

## सर्वोपरि परम कर्त्तव्य

मेरे प्यारे! ऋषिवर मैं वाक्य उच्चारण करता-करता बेटा! बहुत दूरी चला गया हूँ, वाक्य मुझे अनुसन्धान के लिये जाना था, आज मुझे यह वाक्य नहीं उच्चारण करना था, क्या पुनः से विज्ञान के क्षेत्र में चला जाऊँ। यह तो विषय हमारा चलता रहेगा, आज तो केवल यह वाक्य उच्चारण करना था कि हमें वास्तव में चेतना को जानने का प्रयास करना चाहिये। हमारी वास्तविक चेतना क्या है? जिसके आधार पर हम चेतनित हो रहे हैं, वह केवल ब्रह्म ही है, ब्रह्म को जानना हमारे लिये बहुत ही अनिवार्य होता है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर आओ आज ब्रह्म के लिये याचना करते चले जायें। आज मुझे अपना वाक्य भी बहुत सूक्ष्म प्रगट करना है, क्योंकि आज का हमारा वाक्य यह कहता चला जा रहा है, कि हम ब्रह्म के ऊपर अपना अनुसन्धान करते चले जायें, और उस महान् देखो, जैसा इस महान् देखो, जैसा हमने अभी-अभी उच्चारण किया था एक मानव राष्ट्रीय बनना चाहता है। परन्तु राजा को स्वयं को यह विचारना होगा कि मुझे कैसा बनना है, जब मैं प्रजा का अधिपथ्य करने के लिये तत्पर हुआ हूँ। **विधान मेरा कोई हो, परन्तु देखो, मुझे चरित्रवान होना बहुत अनिवार्य है।** अब चरित्र में क्या-क्या वस्तु आती हैं इसके ऊपर भी मानव को विचार-विनिमय करना होता है। एक वह चरित्र है जो मानो देखो, अपने ब्रह्मचर्यव्रत से रहता है, वह भी चरित्र है। एक वह है कि **वाणी का भी चरित्र है, वाणी से कोई शब्द ऐसा नहीं उच्चारण न हो जाये, जिससे दूसरों को कष्ट हो।** मानो देखो, यह वाणी ही राष्ट्र के लिये घातक बन सकती है। तो मानो देखो, मेरा वाणी का भी

अनुसन्धान और वाणी का भी चरित्र होता है। एक मेरे भुजों का चरित्र होता है, नेत्रों का चरित्र होता है, यह अपनी-अपनी इन्द्रियों का जो संयम बनता है, वह चरित्र की नृत्यता को जानता है, कि वास्तव में चरित्र नाम में क्या-क्या वस्तु आती हैं इसके ऊपर भी बेटा! अनुसन्धान करना, विचार-विनिमय करना, यह मानव का परम कर्त्तव्य हो जाता है। एक तो कर्त्तव्य होता है, यह बेटा! सर्वोपरि परम कर्त्तव्य कहलाया जाता है।

## मृत्यु

मेरे प्यारे! ऋषिवर आज हमारा यह वाक्य क्या कहता चला जा रहा था, कि हम परमपिता परमात्मा के आङ्गन में जायेंगे, तो हमारा सर्वस्व चरित्र ऊँचा बन जायेगा। बेटा! हमारा जीवन सर्वोपरि और महान् बनता चला जाता है, जब हम परमपिता परमात्मा को अपना आराध्यदेव स्वीकार कर लेते हैं, तो मृत्यु से पार हो जाते हैं। क्योंकि मानव को निगलने वाली संसार में मृत्यु होती है, और मृत्यु वास्तव में क्या होती है, इसके ऊपर हमारे ऋषि-मुनियों ने बहुत विचार-विनिमय किया है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने तो यहाँ तक कहा है, क्या यह मृत्यु ही ब्रह्म है, जिससे मानो देखो, यह कहा है कि मृत्यु ही ब्रह्म है, क्या मृत्यु का यह सर्वस्व रूप है, जब प्रलय काल आती है, तो यह मृत्यु ही तो सर्वस्व प्रकृति को निगल जाती है ऐसा कहीं कहा है। परन्तु हमारे यहाँ तो बेटा! ऐसा कहा है, क्या मृत्यु ही वह है कि मानव चेतना को नहीं जानता और जड़ता में सदैव रमण करता रहता है, वह संसार में मृत्यु से सदैव मुख में रहता है।

मेरे प्यारे! संसार में शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं कहते। शरीर को त्यागना ही होगा। एक समय आता है, जब मानव शरीर को त्यागता है, यह अन्तरात्मा शरीर को त्याग देता है, क्योंकि आत्मा, अन्तरात्मा के लिये बेटा! किसी का पुत्र अथवा पुत्री नहीं बनता है। तो इसीलिये हमारे यहाँ यदि आत्मा में इतनी मोह ममता होती, तो बेटा! देखो, यह अपने मानो देखो, पुत्र जो बने हैं, यह संसार बना है एक नवीन रचना बनी है, मानो देखो, यह त्याग करके किसी

भी काल में नहीं जाने के लिये तत्पर होता। यह मुनिवरो! देखो, यहाँ आत्मा के सम्बन्ध में, केवल प्रकृति की एक महान् सुन्दर रचना है। उसमें वह प्रतिभा है, उसके आधार पर मानो देखो, विचार-विनिमय उसी के आधार पर मानो मानव अपने मन के वशीभूत होकर करके ममता स्वीकार कर लेता है।

मेरे प्यारे आचार्यो! ऋषिवर ने यह कहा है, कि मृत्यु सबको निगल जाती है, मृत्यु मानो अभिमानी बनता है, न आती है तो मृत्यु आ करके उसको निगल जाती है। कैसी मृत्यु आती है? वह मृत्यु मानव के समीप हताश बन करके आती है। अहा! बेटा वह हतप्रव्हे अस्ति अस्तुत कृताम। मेरे प्यारे! ऋषिवर निराशा बन करके आती है, और वह जब निराशा बन करके आती है, निराशा ही संसार में बेटा! मानव की मृत्यु कहलायी जाती है। तो आओ मेरे प्यारे! ऋषिवर आज हम प्रभु का गुणगान गाते चले जायें, और हम यह विचारते चले जायें, कि हम मृत्यु से कहाँ जा करके पार हो सकते हैं। बेटा! **आचार्यजनों ने कहा है कि संसार में वही मानव मृत्यु को पार हो सकता है, जो ब्रह्म की चेतना को जानता है, ब्रह्म के ज्ञान को जानता है, ब्रह्म की चेतना पर अपना अधिपथ्य कर लेता है।** अपने को उसमें रमण कर लेता है, वह और प्रकृति पर उसका अधिपथ्य हो जाता है तो वह मानव बेटा! मृत्यु से पार हो जाता है। इसीलिये आचार्यों ने कहा है, क्या जो मानव मृत्यु से पार होना चाहता है, मृत्यु को उल्लांघना चाहता है, वह ब्रह्म की चेतना, ब्रह्म की शरण आ जाये, **ब्रह्म की शरण में आ जाने से, बेटा! हम सर्वत्र जान सकते हैं।** यह आज का हमारा वाक्य है, आज के हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह क्या हम प्रभु की चेतना को सदैव स्वीकार करते रहें, और ब्रह्म की चेतना पर और जड़ता पर विचार-विनिमय करते, अनुसन्धानवेत्ता बनते रहें। बेटा! यह आज का हमारा वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है।

## मानव का कर्त्तव्य

मैं आज कोई अधिक चर्चा तो प्रगट करने नहीं आया था। आज के वाक्यों का अभिप्रायः हमारा यह था, कि हम सदैव उस ब्रह्म की चेतना में रमण

करते रहें। आनन्दपूर्वक ब्रह्म को जानते रहें और रहा यह कि मानव का जीवन तो संसार में आता है पश्चात् में, परन्तु अनुसन्धान इस पर सबसे प्रथम वस्तु है। अहा! एक से एक वस्तु पर अनुसन्धान करता रहता है, एक गृह आश्रम में ब्रह्मचारी जाता है, परन्तु देखो, उसको कुछ काल में उस गृह आश्रम का अनुभव होता है। परन्तु देखो, उसके पश्चात् वह अनुसन्धान में लग जाता है, अब युवा था, अब मध्य काल में आ गया, अब वृद्धपन आ गया, मानो यह भी तो अनुसन्धान है। क्या, तू वृद्ध काल में क्यों आ गया, कौन-सी गति, कौन-सी चेतना ऐसी है जो तुझे वृद्ध काल में ले आती है? वृद्ध काल तेरा आ गया, मानो कहीं जैसी गति बाल्यकाल में माता की लोरियों में दूधि का पान कर रहा था, आनन्दपूर्वक रमण कर रहा था, अब वह समय आ गया तू वृद्ध हो गया। अरे! क्यों हो गया? कौन-सी ऐसी चेतना है, ब्रह्म की इस प्रकृतिवाद में क्या यह ब्रह्म की चेतना है, या प्रकृतिवाद है, उसके ऊपर बेटा! कल हम विचार-विनिमय करेंगे। आज का वाक्य यह समाप्त होने जा रहा है, परन्तु प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है, एक तो कर्त्तव्य होता है और एक परम कर्त्तव्य होता है कि प्रत्येक वस्तु का अनुसन्धान करना और ब्रह्म की चेतना का अनुसन्धान करना तो यह बहुत ही अनिवार्य है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर आज का यह वाक्य हमारा समाप्त होने जा रहा है। कल मुझे समय मिलेगा, तो बेटा! शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगे। आज का वाक्य अब यह समाप्त होने जा रहा है।

**आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः** क्या, कि हम ब्रह्म के आङ्गन में जायें, ब्रह्म की चेतना में पहुँचे, यदि हम सर्वस्व वैज्ञानिक बनना चाहते हैं, बुद्धिमता बनना चाहते हैं, योगी बनना चाहते हैं, तो ब्रह्म के आङ्गन में जाओं, और **प्रभु के आङ्गन में जाने से बेटा! मानव को परम शान्ति प्राप्त होती है। क्योंकि अग्नि की जो गति है, ऊर्ध्वा होती है,** किसलिए होती है? क्योंकि उसका स्वामी ऊर्ध्वा में रहता है, क्योंकि सूर्य से अग्नि का सम्बन्ध है, अग्नि की ऊर्ध्वागति प्रायः होती है। तो बेटा! अग्नि ऊपर को जाने के लिये प्रदीप्त होती है, इसी प्रकार मानव का जो अन्तरात्मा होता है उसकी ऊर्ध्वागति होनी चाहिये। ऊर्ध्वागति जब होती है, इसको शान्ति प्राप्त होती है। क्यों होती

है? क्योंकि उसका स्वामी जो है, वह ऊर्ध्वा में रहता है, उसकी गति भी ऊर्ध्वा है। **चेतना की जो गति होगी, वह ऊपर को, ऊर्ध्वा होगी,** परन्तु ध्रुवा नहीं होगी, प्रकृति की गति ध्रुवा होगी, नीचे को ले जाने वाली है। इसीलिये प्रकृति में जा करके अन्तरात्मा कदापि प्रसन्न नहीं होता। तो मेरे प्यारे! **आज हमें विचारना है कि हमें ऋषिवर! ब्रह्म की चेतना में जाना है। ब्रह्म के लिये हमें सदैव चिन्तन करना है।** अपनी ऊर्ध्वागति बनाना हमारा परम कर्त्तव्य है। अब वेद का पाठ होगा बेटा! समय मिलेगा तो शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगे।

महर्षि महानन्द जी – गुरुदेव! वाक्य तो आपका बहुत प्रिय और सुन्दर हुआ परन्तु समय बहुत सूक्ष्म।

पूज्यपाद-गुरूदेव – बेटा! कल समय मिलेगा तो अधिक चर्चायें कल प्रगट करेंगे।

महर्षि महानन्द जी – तो भगवन्! कल समय प्रदान किया जायेगा, तो बहुत ही सुन्दर होगा।

पूज्यपाद-गुरूदेव – हास्य.... कल जैसा भी समय होगा उसके अनूकुल बेटा! वाक्य प्रगट करेंगे। आज का वाक्य तो समाप्त होने जा रहा है। तो मुनिवरो! आज का वाक्य हमारा समाप्त होने जा रहा है। अब जैसा कल समय होगा, हम उच्चारण करेंगे, अब वेद का पाठ।

वेद पाठ .....

**दिनाँक** : 20 अगस्त, 1969
**स्थान** : आर्य समाज लोधी रोड़,
जोर बाग, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

# प्रभु की चेतना में रमण करने की प्रेरणा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ नित्यप्रति वेदों का क्रम उच्चारण अथवा उनकी पद्धतियों का विवरण और उसका क्रम सदैव प्रचलित रहता है, क्योंकि हमारा जो वेदज्ञ ज्ञान है, उस महान् ज्ञान में पवित्रता है, और वह किस प्रकार का पवित्र है, जैसे ब्रह्म पवित्र है, इसी प्रकार, वेदों का ज्ञान भी पवित्र है। क्योंकि उसमें इतनी पवित्रता हम क्यों स्वीकार करते हैं, **जो ज्ञान सर्वत्र ब्रह्माण्ड के लिये एक तुल्य होता है, उस ज्ञान को हमारे यहाँ पवित्र कहा जाता है।** तो मेरे प्यारे! ऋषिवर यह जो वेदों का अनुपम प्रकाश है हमने बहुत पूर्व काल में, पूर्व स्थलों में भी उच्चारण किया है और इसकी प्रतिभा का परम्परा से वर्णन करते चले आये हैं। आज हम ही नहीं वर्णन कर रहे हैं, हमारे सर्वस्व ऋषि-मुनियों ने, वेदज्ञ आचार्यों ने, सभी ने इसका सुन्दर रूपों से इसका निरूपण किया है।

## पवित्र ज्ञान की प्रतिभा

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर आज हम उस परमपिता परमात्मा वेदों की पवित्र ज्ञानमयी, आनन्दताओं का हम वर्णन करते चले जायें। हमने बहुत पूर्व काल में, इस अनुपम प्रतिभा का वर्णन करते हुए भी कहा है, आज भी हमारे स्मरण आते चला जा रहा है, हमारे यहाँ यह ईश्वरीय वेदों का ज्ञान विद्यमान है, यह विचार-विनिमय का, हमने सर्वस्व विचारक ब्रह्मवेत्ता सभी, इस वाक्य को स्वीकार करते हैं। बेटा! यह हमारे यहाँ परम्परा आचार्यों ने भी और वैज्ञानिक पुरुषों ने भी इसको सिद्ध किया है। एक समय मुझे स्मरण है, जब यहाँ बेटा!

महाराजा अर्जुन से यह प्रश्न किया गया, जब वह मङ्गल मण्डल से यहाँ, तो उनसे से यह प्रश्न किया गया कि वहाँ से क्या प्राप्त करके आये हैं? तो महाराज अर्जुन ने वहाँ प्रश्न करने वाले कौन? महाराजा द्रोर्णाचार्य थे। महाराजा द्रोणाचार्य ने कहा हे पुत्र! तुम क्या प्राप्त करके आये हो? उन्होंने कहा कि महाराज आपकी अनुपम कृपा से, मैंने वहाँ नाना प्रकार के वैज्ञानिक अस्त्रों-शस्त्रों को जानने का प्रयास किया। मैंने यह जो ब्रह्मास्त्र है, भगवन् इसको मैंने उस अहा! प्रमाणी प्राप्त किया है और एक कृति भी यन्त्र है, जो यहाँ मानो देखो, यहाँ उसकी सूक्ष्मता मानी जाती है। मेरे प्यारे! अहा! ऋषिवर विज्ञान में, मानव जब वैज्ञानिक बनने के लिये चलता है, तो उसके लिये क्या-क्या उसका अभिप्रायः यह भी महाराजा ने प्राप्त कराया कि हे अर्जुन! वहाँ ज्ञान की प्रतिभा किस प्रकार की है? उस समय महाराजा अर्जुन ने कहा वेदा बृहस्तति सुप्रजा अस्वंति रुद्रो भागा प्रकृति व हे प्रभु! अध्वानं बृहस्ति सुप्रजा। महाराज अर्जुन ने कहा कि हे भगवन्! वहाँ वेदज्ञ ज्ञान अस्ति सुप्रजा मानो वहाँ वेदों का पवित्र ज्ञान है, और वह सुमति से प्राप्त करते हैं, इसी के आधार पर वहाँ विज्ञान की प्रतिभा मानी जाती है। परन्तु रहा यह वाक्य, कि विज्ञान को हम किस रूप में स्वीकार करते हैं अथवा वेदों का ज्ञान वहाँ किस रूप में स्वीकार करते हैं, यह भी एक महान् विचार का विषय रह गया था, तुम्हारा क्या महाराजा अर्जुन ने कहा ब्रह्मणे अप्रहे कास्वानं ब्रीहि असवि विग्राता मनु सुप्रजा व्यापनोति ब्रह्मणा, वहाँ भी भगवन्! देखो ब्राह्मण हैं, ब्रह्मवेत्ता हैं, मानो ब्रह्म विचारक हैं, विचारक होने के नाते वेद पर अधिक से अधिक अनुसन्धान होता है, अनुसन्धान होने के नाते राजन्न नमा प्रवे सुति क्योंकि राज का विधान भी मानो वेदा प्रवे अस्ति वेदा वह जो वेद आज्ञा करता है उसके अनुसार बरतते हैं, प्रभु! देखो, तो मुनिवरो! यह उन्होंने यह वाक्य यहाँ आ करके निर्णित कराया। यह कहा कि भगवन्! वहाँ पवित्रत्त्व है, मानो यह वाक्य दूसरे हैं कि वहाँ का वातावरण, उसके अनुसार विचारक पुरुष होते हैं, अहा! परन्तु ज्ञान की प्रतिभा, ज्ञान के यहाँ भी प्राणी मात्र रहता है। बेटा! वहाँ ज्ञान की प्रतिभा एक रत्त ही रहती है, इसीलिये वेदज्ञा ज्ञान प्रव्हे वेद के ज्ञान को पवित्र कहा गया है। क्योंकि जो समस्त ब्रह्माण्ड में एक-सा ही

निर्णय करने वाला हो, उसी को हमारे यहाँ पवित्र ज्ञान की प्रतिभा कहा जाता है।

## प्रभु का अनुपम ज्ञान अनन्त

मेरे प्यारे! ऋषियों आज मैं कहाँ चला गया हूँ, मुझे यह वाक्य उच्चारण करने का अवसर नहीं प्राप्त हो रहा था। वाक्य यह प्रारम्भ करते चले जा रहे थे कि आज हम वेद के उस पवित्र ज्ञान को स्वीकार करने का प्रयास करें क्योंकि वही वेदों का ज्ञान सर्वत्र है। क्योंकि उसकी प्रतिभा सर्वत्र है। आज मेरे प्यारे महानन्द जी यह कहा करते हैं कि नाना प्रकार के रूढ़िवादी यह स्वीकार नहीं करते, मैं यह कहा करता हूँ बेटा! इसमें जितनी भी सुन्दरता है, ज्ञान की प्रतिभा है, परमात्मा का चिन्तन करने का विधान है। परन्तु उसमें जितनी सुन्दरता है, वह सब वेद से ही आती है। वेद की ही प्रतिभा होती है उसमें, परन्तु यहाँ **वेद नाम ज्ञान को कहते हैं, पवित्रवाद को कहते हैं, जिस ज्ञान में पवित्रवाद होता है, उसी को वेद की उपाधि प्रदान की जाती है,** बेटा! हमारे यहाँ यह स्वीकार नहीं किया गया है, क्या आज हम चारों वेदों की पोथी में से केवल वेद के ज्ञान को कटिबद्ध कर सकते हैं। हम उसी में ही देखो, प्रतिष्ठित कर सकते हैं, यह ज्ञान ऐसा अनुपम है, जैसे परमात्मा अनुपम हैं, और अनन्त हैं, इसी प्रकार मुनिवरो! जैसे नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर प्रभु की अन्नतता में परणित हो रही है, दृष्टिपात आती है। इसी प्रकार बेटा! उस प्रभु का ज्ञान, वेदों का ज्ञान भी अनन्तता में स्वीकार किया गया है, यह हम नहीं उच्चारण कर रहे हैं, आदि-ऋषियों ने बेटा! इस ज्ञान की प्रतिभा का वर्णन करते हुए कहा है। आज इस पर जितना भी विचार किया जाता है कि इससे सुन्दर प्रतिभा का जन्म होता रहता है। **एक से सुन्दरता का, प्रतिभा का जन्म होता रहता है।** उसी जन्म के कारण मुनिवरो! देखो, मानव अपने को आभा में स्वीकार करता हुआ आगे को चलता है, अग्रणीय बनता चला जाता है। ज्ञान का अपने को पथिक बना लेता है। बेटा! मानव सुन्दर मार्ग को मानो स्वतः ही प्राप्त कर लेता है, जैसा हमने कल के वाक्यों में प्राप्त कराया। आज प्रत्येक मानव के ऊपर एक

विचार है, कि मानो देखो, मानव की दृष्टि किस प्रकार परिवर्तित हो जाती है। आज एक मानव देखो, माता की लोरियों में आनन्दत्व को प्राप्त कर रहा है, माता की लोरियों में जीवन को प्राप्त कर रहा है। दिव्यों का पान कर रहा है, वही बालक, मुनिवरो! युवा हो जाता है। युवा हो जाने के पश्चात् वह प्रतिभा कहाँ से क्योंकि वह प्रकृति का जो व्यापकवाद है, मानो उसमें जो प्रसारण करने की अनुपम शक्ति है, वह शक्ति मुनिवरो! क्योंकि प्रकृति से बना हुआ यह पिण्ड स्वीकार किया जाता है। आत्म ब्रह्म एकारसो ऐसा आचार्यों ने स्वीकार किया है। कृति आत्मा इस शरीर में मानो एक रस रहने वाला, इस आत्मा का न कोई स्थूल होता है, और न वह मानो देखो, संकीर्णता में जाता है, अहा! जैसा भी विचारक अब्रहे अग्रणा कृति मानो देखो, वही **प्रकृति के जो तत्त्व होते हैं, वह सन्निधान मात्र से ही मुनिवरो! देखो, आकुञ्चनवाद और उसमें प्रसारणवाद की गति स्वतः आती रहती है।** क्योंकि वह सन्निधान जो पूर्व हो गया है, उस सन्निधान मात्र से ही सर्वत्र चल रहा है।

## आकुञ्चन शक्ति

मेरे प्यारे! ऋषिवर, आदि-ऋषियों ने इसके ऊपर बहुत सुन्दर-सुन्दर टिप्पणियाँ दी हैं, आज भी मैं उस टिप्पणी को प्रदान करने वाला हूँ। आदि-आचार्यों ने कहा है कि वह जो आकुञ्चनवाद है, मानो देखो, उसमें आकुञ्चन शक्ति होती है, वह भी शरीर में विद्यमान है, इसीलिये, मुनिवरो! देखो, शरीर में आकुञ्चन वहाँ होता है। माता के गर्भस्थल से कैसा सूक्ष्म-सा आता है, अहा! वह कितना सूक्ष्म बन करके आता है, क्योंकि उसका जन्म होता है। तो जब जन्म होता है तो मुनिवरो! देखो, प्रकृति का देखो, सम्पूर्ण भाव जिसे हम आकुञ्चन शक्ति कहते हैं, वह उसमें विद्यमान होती है। उसके पश्चात् जब वह प्रबल होने लगता है, तो वह मानो देखो, वह आकुञ्चन, अपना कार्य भार त्याग देती है। त्याग करके उसमें एक मानो देखो, उसमें ऊर्ध्वागति आनी प्रारम्भ हो जाती है, और प्रसारण क्रिया आ जाती है। अहा! देखो, उस क्रिया के आधार पर क्योंकि वह उस चेतना का जो सन्निधान मात्र हो गया है। प्रकृति से उस चेतना

के सन्निधान मात्र से बेटा! देखो, मानव के वह ब्रह्म की जो चेतना है, वह उसके प्रकृति से उसका सन्निधान है, सन्निधान होने के नाते बेटा! देखो, स्वतः ही बेटा! मानव की प्रक्रिया में परिवर्तित होता चला जा रहा है, और शरीर वह जो चेतना, आत्मा की चेतना है, आत्म ब्रह्म अकृति मानो देखो, वह जो प्रकृतिवाद है वह जो चेतना सन्निधान मात्र से आत्मा की चेतना शरीर में हैं उसके स्वभाव से बेटा! प्रकृति का स्वभाव, ऐसे उमड़ जाता है जैसे माता के अपने पुत्र को व्याकुल हुये को दृष्टिपात करके बेटा! जैसे दधी में दुग्ध उमड़ आता है। इसी प्रकार मुनिवरो! देखो, जैसे ऋतु में, ग्रीष्म ऋतु आती है तो पृथ्वी से देखो, तेज उगलना प्रारम्भ हो जाता है, तेज की सुचेता उत्पन्न हो जाती है। और मुनिवरो! देखो, जैसे अप्रतम् ब्रह्मे अकृतां मुनिवरो! देखो, जब वर्षा ऋतु आती है वसुन्धरा के गर्भ में देखो, जब जल की स्थापना होती है, उस समय वसुन्धरा के गर्भ से बेटा! नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म हो जाता है, स्वतः उत्पन्न होने लगती हैं, स्वतः उसका भाव उत्पन्न होने लगता है। उसका कारण क्या है? क्योंकि वह जो सन्निधान मात्र था मानो देखो, वह जो सन्निधान मात्र जो चेतना का है प्रकृति का स्वभाव उमड़ आता है जैसा भी काल, समय होता है जैसा भी प्रवर्त्तिता में आने लगता है परन्तु उसी के आधार से, उसका स्वभाव उमड़ आता है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! इसी प्रकार मानव के शरीर का स्वभाव उमड़ने के लिये तत्पर हो जाता है, उमड़ने लगता है और वह स्वतः ही मुनिवरो! देखो, उसकी प्रबलता होने लगती है, युवा हो जाता है। युवा हो जाने के पश्चात् क्योंकि वह निरन्तर प्रथा वीर सतानम् वेद का आचार्य कहता है वह जो जन्म है मानो जिसको हम, जिसको वीर क्रान्ति का अस्तुति मुनिवरो! जिसको हम पुरूख कहते हैं, पुरखा कहते हैं, जिसे हमारे यहाँ देखो, जन्म ब्रीहि असते मानो जो शरीर का वनस्पतियों का जो रस है, वनस्पतियों का रस मानव के शरीर में ऐसे प्रबल बन जाता है शरीर का कार्य करता है, वह पुरुष ही बेटा! देखो, वीर्यवान कहलाता है। पुरुष के यहाँ, वह तेजस बन जाता है क्योंकि वह जो नाना प्रकार की वनस्पतियाँ जो मानव पान करता है, उन वनस्पतियों में वह रसस्वादन है, वही मानो देखो, तेज को उत्पन्न करने वाला है, और वही मानव की प्रतिभा को

ओत-प्रोत कराता हुआ, मानव के शरीर का ओज उत्पन्न होना प्रारम्भ हो जाता है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर वह जो वनस्पतियों का जो मानो रस है उसी को हमारे यहाँ **पुरखा** कहा जाता है, उसी को हमारे यहाँ वीर्यवत कहा जाता है, पुरूख कहते हैं। आगे चल करके बेटा! इसी वनस्पतियों की संसार की जो गति है, वह ब्रह्म की जो चेतना प्रकृति में स्वतः उत्पन्न हो गई थी, परन्तु उसी सन्निधान मात्र से ही अहा! प्रकृति का स्वभाव स्वतः देखो, उत्पत्ति और विनाश का कार्य होता चला जाता है।

## आशा, निराशा के कारण

मेरे प्यारे! ऋषिवर मानव की प्रवृत्तियों में किसी काल में उत्सव उत्पन्न हो जाता है, किसी काल में उसके हृदय में निराशा की चेष्ठा आ जाती है। बेटा! निराशा आ जाती है, क्यों आ जाती है? क्योंकि प्रकृति का स्वभाव है। जैसे समुद्र की तरङ्गें होती हैं। समुद्र की तरङ्गों में हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने कहा है, समुद्र की तरङ्गें देखो, वह देखो, अमावस्या को समुद्र की तरङ्गें देखो, वह निराशा में परिवर्तित होती हैं और उस समय देखो, चतुर्दशी और देखो, पूर्णिमा आती है – सोम से चन्द्रमा का सम्बन्ध होता है तो बेटा! देखो, उसमें स्थूलता आ जाती है, ऊर्ध्वागति हो जाती है, सोम अपने आनन्द को चलता है। इसका अभिप्रायः यह है कि इसी प्रकार क्योंकि मानव के शरीर में क्योंकि समुद्र भी है, मानव के शरीर में प्रकृति का सर्वत्र व्यापार हो रहा है, व्यापार होने के नाते, उस मानव शरीर में ही बेटा! निराशा छा जाती है। किसी काल में उत्सव आ जाता है। एक मानव किसी काल में यह विचारता है कि मैं योगी बनने जा रहा हूँ, एक मानव यह चाहता है कि मैं चन्द्रमा की यात्रा करने जा रहा हूँ, चन्द्रमा के लिये अपना उत्सव बनाता है, मानो देखो, वह अब मैं कैसे यन्त्रों को जानूँ किन यन्त्रों के जानने के प्रयास से, यह विचार-विनिमय करता है। मानो वह योगी बनने के लिये प्रयत्न करता है, सन्ध्या, उपासना करनी चाहिये।

विचार आता है मन में मुनिवरो! परन्तु देखो, समय आता है क्या वह देखो, विचार शान्त हो जाते हैं, उसका कारण क्या है कि मानव के जीवन में मैंने

कल के वाक्यों में कहा था बेटा! कि मानव के जीवन में देखो, करोड़ों-करोड़ों वर्षों के संस्कार, करोड़ों-करोड़ों जन्मों के संस्कार बेटा! मानव के चित्त में विराजमान होते हैं। जैसे पृथ्वी में बेटा! देखो, जैसे बीज होता है। परन्तु देखो, वर्षों तक, बीज पृथ्वी में स्थापित रहता है जब वर्षा ऋतु आती है इस बीज की स्वतः बेटा! देखो, चेतना से जल के द्वारा जब जिसकी चेतना है, तरङ्गों की चेतना है, मानो उसी आधार पर बेटा! वह बीज उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार बेटा! मानव के शरीर में जो वह जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार हैं, यदि वह संस्कारों को बेटा! महानता उदय हो गया तो वह जो वह दृढ़ हो जाते हैं। विचार आये बेटा! और यदि उनमें मानो देखो, एक निराशा का अङ्कुर उत्पन्न हो गया, पाप कर्म का देखो, कोई अस्वत संस्कार मानो देखो, मानव के समीप आ जाता है, तो बेटा! वह प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है, और जैसे अमावस्या का समुद्र होता है, शान्त कोई तरङ्गें नहीं होती, क्योंकि वह शून्य हो जाता है प्राणी, यह संस्कारों का एक महान् समूह, यह मानव के समीप आ गया है। क्योंकि जैसे उस महान् प्रभु ने, मानो प्रकृति को चेतना दे करके, संस्कार कर लिया था, संस्कार करते उसी मानो **संस्कार से संस्कार को हम एक रूप में सन्निधान कहते हैं,** उसी के आधार पर बेटा! देखो, प्रकृति का चक्र चलता रहता है, स्वतः अपना कार्य चलता रहता है, उसका व्यापार ऐसे चलता रहता है। जैसे मुनिवरो! देखो, मानव के मन की प्रबल अर्थ की कल्पना होती है, उसी के आधार पर, क्योंकि मन की एक सरल धारा उत्पन्न होती रहती है।

## मन की धाराएँ

आओ, मेरे प्यारे! आज हम यह विचार-विनिमय करते हैं कि मन की उत्पत्ति क्या है और मन क्या है? जो मानव के शरीर में चञ्चल बन करके रहता है। क्या मन के आश्रित हो करके, वह संस्कार उत्पन्न होते हैं, या मन से कोई पृथक् वस्तु है। आचार्यजनों ने कहा है इस सम्बन्ध में बेटा! मुझे एक वार्त्ता स्मरण आती चली गई है। एक समय बेटा! देखो, मैंने यह वाक्य पूर्व काल में भी प्रगट किया है, एक समय जब महर्षि गौतम जी को देखो, एक समय उनके

पिता जी, अरुण जी ने कहा कि हे पुत्र! जाओ तुम शिक्षा को प्राप्त करके आओ। तो मुनिवरो! देखो, वह जब आचार्य के कुल में पहुँचा, तो उन्होंने नाना प्रकार की विद्या का अध्ययन किया। अध्ययन करने के पश्चात्, जब वह गुरु के कुल से अपने पिता के कुल में आये तो उनको अभिमान हो गया, कि मैंने संसार की विद्याओं का अध्ययन कर लिया है। तो मुनिवरो! देखो, वह पिता यह विचारता है, कि यह क्या है कि मानो जो मेरे पुत्र के मन में यह क्या विचार? उन्होंने कहा ब्रह्मा कस्मति सुप्रजा आ गये हैं तो मुनिवरो! जाता प्रहे अस्वंति रुद्रा हे भगवन्! मैंने संसार की सम्पन्न विद्याओं को प्राप्त कर लिया है। तो उन्होंने कहा सूत और प्रसूत किसे कहते हैं? देखो, तो मुनिवरो! दोनों के ऊपर विचार-विनिमय हुआ, तो ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु मेरे गुरु ने इस विद्या को प्रदान नहीं किया है। उन्होंने कहा तो अरे! तुमने जाना ही क्या है देखो, तो मुनिवरो! वह दोनों, पिता और पुत्र का, दोनों का विवाद प्रारम्भ हो गया, तो मानो दोनों के ज्ञान और विज्ञान की चर्चा प्रारम्भ होने लगी। उन्होंने जब मन की धाराओं का वर्णन कराया – सबसे प्रथम देखो, ब्रह्म के ऊपर विचार-विनिमय में चला। तो ब्रह्म के ऊपर विचार-विनिमय चला, तो उन्होंने कहा हे वत्स्! तुम एक पात्र में जल ले आओ। तो मुनिवरो! देखो, जल को ब्रह्मचारी ने स्थिर कर दिया। उन्होंने कहा यह लवण है, इसको जल में स्थिर कर दो। मुनिवरो! देखो, जल में स्थिर कर दिया, अर्पित करने के पश्चात् जब वह देखो, जल में रमण कर गया, उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! अब इस पात्र में से लवण को लाओ। उन्होंने यह विचार किया, अब इसको गणित किया तो मुनिवरो! देखो, निर्णय करने के पश्चात् वह लवण नहीं था। ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! वह लवण इसमें नहीं है। उन्होंने कहा अरे! लवण कहाँ गया? उन्होंने कहा प्रभु! वह तो जल में प्रतिष्ठित हो गया। उन्होंने कहा यह जो जल में लवण जैसे प्रतिष्ठित हो गया है ऐसे ही ब्रह्म भी इस संसार में प्रतिष्ठित हो रहा है। मानो जैसे जल में यह लवण प्रतिष्ठित है, इसी प्रकार ब्रह्म भी इस ब्रह्माण्ड में, इस सर्वस्व जगत में प्रतिष्ठित हो रहा है। तो मुनिवरो! विचार-विनिमय चलता रहा। अहा! वह इस विचार के आगे प्रश्न उत्तर – उन्होंने कहा, हे ब्रह्मचारी! **यह जो प्राण है यही मानव का जीवन है।**

**प्राण के आश्रय ही मानो देखो, यह सूक्ष्म से प्रबल हो जाता है।** इसमें ही देखो, इसमें ही मानो देखो, रहने की शक्ति है। इसी में ही देखो, प्रबल बनाने की शक्ति है, यह वह प्राण है, जो मानव के शरीर में आवागमन करता रहता है, इस प्राण के जानने का ब्रह्मचारी तुम प्रयास करो। उन्होंने कहा भगवन्! बहुत सुन्दर। और **यह जो मन है, यह स्मरण शक्तियों का केन्द्र कहलाया जाता है।** केन्द्रित करता है, यह और मानव को स्थिर कराता है, क्या वास्तव में देखो, यह मन क्या है अस्वते अस्वति रुद्रो माणा। आचार्य तो यह कहते हैं कि विश्वभान है। मानो ये इसमें रमण करने वाला है, परन्तु यह जो मन है, यह शरीर में स्मरण शक्तियों का केन्द्र कहलाया गया है।

## स्मरण शक्ति

मेरे प्यारे! ऋषिवर, ब्रह्मचारी ने अहा! देखो, अपने अनुभव में, ये वाक्य लाने का प्रयास किया, क्या वास्तव में स्मरण शक्ति मन से आती है, या प्राण भी इसका कोई रूप माना गया है। ब्रह्मचारी ने बेटा! अन्न को त्याग दिया, अन्न को त्याग देने के पश्चात् वह ब्रह्मचारी मुनिवरो! देखो, वह पन्द्रह दिवस तक उन्होंने अन्न को त्याग दिया, अन्न को त्याग करके केवल जल का ही पान करते रहे, जल का पान करने से प्राण तो स्थिर रहे हैं क्योंकि प्राण की गति प्राप्त होती रही, वह आवागमन करता रहा। आवागमन करने के पश्चात् मुनिवरो! देखो, ब्रह्मं अस्वति आ अस्वंति रुद्रा प्राणा ब्रह्मचारी ने बेटा! जब दुर्बल हो गया और स्मरण शक्ति शान्त होने लगी, अपने पिता के द्वार पर आ गया, पिता से कहा, भगवन्! मेरे लिये प्राण की गति तो ज्यों की त्यों स्थिर हो रही है, परन्तु देखो, स्मरण शक्ति का केन्द्र समाप्त हो गया है। उन्होंने कहा, हे ब्रह्मचारी! अब तुम अन्न की पूजा करो, अन्न को पान करना प्रारम्भ कर दो। तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने अन्न को प्रारम्भ कर दिया, अन्न को पान करने लगे, तो स्मरण शक्ति पुनः जागरूक हो गई। स्मरण शक्ति जागरूक हो गई, तो इसका अभिप्रायः यह है कि **मानव की स्मरण शक्ति का जो केन्द्र है वह मस्तिष्क में स्वीकार किया गया है।**

## चार प्रकार के मस्तिष्क

वह जो स्मरण शक्ति का केन्द्र है वह मस्तिष्क में है और मस्तिष्क का जो सम्बन्ध है क्योंकि मस्तिष्क भी यहाँ कई प्रकार के होते हैं, एक जैसे मस्तिष्क होता है, एक लघु मस्तिष्क होता है, एक महाअकृति मस्तिष्क होता है, एक महा लघु मस्तिष्क होता है। चार प्रकार के मस्तिष्क होते हैं बेटा! **इन चार प्रकार के मस्तिष्कों में इन मन की प्रतिभा रमण करती रहती है।** क्योंकि चार प्रकार की प्रतिभा, जब इसमें रमण करती रहती है, इसका सम्बन्ध बेटा! चार प्रकार की बुद्धियों से स्वीकार किया गया है जैसा मैंने पूर्व काल में वर्णन करते हुए कहा है – बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञा इसी से बेटा! देखो, यह मन की ही प्रतिभा है, मन की ही दशा है क्योंकि मन की प्रतिभा से बुद्धि का केन्द्र में है लघु मस्तिष्क, वहाँ महा प्रतिभा मस्तिष्क से बेटा! नाना प्रकार की सूक्ष्म वार्त्ताओं का जन्म होता रहता है। सूक्ष्मवाद का जन्म होता रहता है और वह देखो, जो महा लघु मस्तिष्क है, **उसी महा लघु मस्तिष्क का बेटा! नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों से सम्बन्ध होता है। वह जो महा लघु मस्तिष्क है उसे ब्रह्मरन्ध भी कहते हैं, और कृति महा मस्तिष्क भी कहा जाता है। बेटा! उसको और उसको लोकों प्रतिक्रियावादी मस्तिष्क भी कहा जाता है।** परन्तु उस मस्तिष्क में बेटा! वह जो सूक्ष्म वाहक तरङ्गें चलती रहती हैं, क्योंकि वह जिसको हमारे यहाँ ब्रह्मरन्ध कहते हैं, उसमें नाना प्रकार की तरङ्गों का जन्म होता रहता है। और उन तरङ्गों का सम्बन्ध बेटा! लोक-लोकान्तरों से होता है, इसीलिये योगी जब ब्रह्मरन्ध में जाता है, महा लघु मस्तिष्क में चला जाता है। उसका अन्तरात्मा तो बेटा! वह इस प्रकृति पर संयम करता हुआ मेरे पुत्र! देखो, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों का स्वामित्त्व बन जाता है।

## मन की तरङ्गें

मेरे प्यारे! ऋषिवर मैं योग के विषय की चर्चा प्रगट नहीं कर रहा था। वाक्य यह प्रारम्भ होता चला जा रहा था, क्या ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारी! यह जो मन की जो तरङ्गें हैं वह मस्तिष्क से ले करके वह महा लघु मस्तिष्क तक ब्रह्मरन्ध

जिसका केन्द्र रहता है। आगे चल करके कहा है कि यह मानव के उदर में भी विराजमान रहता है, क्योंकि इसमें विभाजनवाद है, **प्राण की जहाँ प्रक्रिया चलती रहती है, वही मुनिवरो! देखो, मन की प्रतिभा है,** और मन के साथ-साथ भ्रमण करता रहता है क्योंकि जहाँ मन नहीं होगा, वहाँ विभाजन नहीं हो सकता बेटा! जहाँ मुनिवरो! देखो, रक्त का शोधन होता है, रक्त की जहाँ ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं मानव के शरीर में, वहाँ मन विराजमान होता है। क्योंकि रक्त का जो विभाजन करता है, रक्त को जो शुद्ध को और अशुद्ध को विभाजन करता रहता है, वह सब मन का ही कार्य, मन का व्यापार होता रहता है। इसी प्रकार यह जो मानव के शरीर में जो उदर है, उदर में जो उदान नाम का जो प्राण है, मानो ये नाना प्रकार के रसस्वादन का विभाजन करता हुआ, मन विराजमान है, क्योंकि बिना मन के बेटा! विभाजन संसार में नहीं होता। इसी प्रकार हमारे यहाँ देखो, इस पृथ्वी में देखो, विश्वभान मन के यह पृथ्वी में रमण करता रहता है और रमण करता हुआ, मानो देखो, यह विश्वभान बन करके मानो किसी भी अङ्ग में यह प्राण रहते हैं, अन्न में देखो, जल में प्राण रहते हैं। **अन्न में बेटा! प्राण की प्रक्रिया स्वीकार की गई है।** आचार्यों ने और इसीलिये कहा है, क्योंकि देखो, अन्न में कहीं-कहीं प्राण को स्वीकार किया गया है, क्योंकि ऋषि ने कहा है। क्योंकि **प्राण का जो विभाजन होता है, वह मन के द्वारा होता है, अन्यथा एक प्राण बन करके बेटा! बिना मन की प्रतिभा के यह प्राण भी शरीर में एक क्षण भर भी नहीं रह सकेगा। क्योंकि देखो, इसका इतना व्यापार है मन का, वह सब देखो, प्राण के मिश्रित हो करके चलता है। क्योंकि प्राण को ही तो विभाजन करता है, प्राण से ही तो तरङ्गें उत्पन्न होती हैं।** जो तरङ्गों का केन्द्र है वह कहाँ है और मुनिवरो! देखो, केन्द्र होता है, वह विभाजन करता है, उसी का नाम तो हमारे यहाँ **मनीराम** स्वीकार किया गया है।

## अन्न में मन

मेरे प्यारे! ऋषिवर हमारे आचार्यों ने कहा है कि **अन्न में ही मानो देखो, मन की प्रतिभा स्वीकार की गई है।** मेरे प्यारे! ऋषिवर! हमारे आचार्यों ने

कहा है, कि अन्न में ही मानो देखो, अन्न में ही मन की प्रतिभा स्वीकार की गई है, **अन्न से ही मानो देखो, स्मरण शक्ति का जन्म होता रहता है।** वह जो अन्न है, उसको हमें वास्तव में जानना है, और प्रतिभा के साथ-साथ जानना है। तो मेरे प्यारे! आज का हमारे यहाँ, हमारा यह मैं क्या कह रहा था कि मैं उच्चारण कर रहा था कि मानव के शरीर में – एक वाक्य रह गया कि मानो देखो, ब्रह्मचारी ने कहा कि हे भगवन्! यह तो मुझे सिद्ध हो गया। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा यह ऋषिवर सूत और प्रसूत माने गये हैं, क्योंकि प्राण और मन दोनों ही इस प्रकृति में व्यापार रूप से कार्य कर रहे हैं, और इन्हीं में विराजमान होने वाली, जो ब्रह्म की चेतना है, वह भी इसी के साथ गमन कर रही है। क्योंकि वह प्राण की भी प्राण है, मन का भी मन है, बुद्धियों का भी बुद्धि है, प्रकृति का भी महा प्रकृति है, अहा! देखो, वह जो ब्रह्मचेतना है, वह उसके साथ रमण कर रही है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर अहा! ब्रह्मे अस्ति सुप्रजा आचार्यों ने कहा है, क्या यह जो मानव का शरीर युवा बन गया था मानो देखो, युवा अहा! इस मन के प्राण के ही रूप इससे मन की विभाजन क्रिया से व्यापार अहा! शरीर युवा बन गया, बाल्यकाल से युवा बन गया। युवा हो जाने के पश्चात् बेटा! देखो, इसमें व्यापार प्रकृति में आ करके व्यापार प्रकृति ने सब बना लिया। तो मुनिवरो! जानो, कि उसका युवापन जो है वह भी देखो, युवा ऊर्ज्या में चला गया और यदि उसने ब्रह्म की चेतना को स्वीकार कर लिया, चेतना में उसकी प्रतिभा रमण करने लगी, तो मानो बेटा! उसका युवापन सुन्दर बन गया है और किसी भी काल में वृद्धपन क्रिया नहीं आती उस मानव को बेटा! क्योंकि वृद्धपन की प्रक्रिया उसे कहते हैं, जहाँ तृष्णा विराजमान होती है कार्य संसार का हो नहीं पाता, क्योंकि प्रकृति का उसने जीवन भर व्यापार किया है, प्रकृति की गोद में रमण कर लिया है उसने, उसके आनन्द को मनाता रहा है, परन्तु देखो, आगे चल करके क्योंकि वृद्धपन आ जाना है, क्योंकि वृद्धपन उसके शरीर में आ गया है, अब तृष्णा क्योंकि तृष्णा के साथ-साथ वृद्धपन चलता है। यदि मानव की तृष्णा प्रबल होती चली गई, अग्नि की भाँति प्रचण्ड हो गई है, और कामना की पूर्ति होती नहीं तो बेटा! ऋषिवर! उसी का नाम वृद्धपन कहलाया गया है। मेरे प्यारे! अभी तो ये युवापन

में ब्रह्म की चेतना में लग जाता है अहा! वह क्योंकि वह गृहपत्य आश्रम में भी, आज का मानव यह कहता है कि गृहस्थ आश्रम में भी प्रभु की चेतना आ सकती है। मैं यह कहा करता हूँ कि प्रभु की चेतना तो सर्वत्र विराजमान है वह कोई ब्रह्म किसी के आश्रम को, कृतिक नहीं करता है, अहा! वह न उसके लिये प्रतिबन्धन का विषय नहीं बन जाता है, वह तो केवल प्रभु का ज्ञान है, मानव का ज्ञान है, मेरी पुत्री का ज्ञान है। अहा! और देखो, वह जो गृह आश्रम में पति-पत्नी का जो ज्ञान है हमारे यहाँ ऋषि ने देखो, यही कहा है बालक नचिकेता से देखो, क्या कहा था, क्या गृह आश्रम में गृहपत्य नाम की अग्नि की पूजा होती है, और उस अग्नि की जो प्रतिभा को जाना जाता है, वह बड़ा आश्चर्य सुन्दर कहलाते हैं। क्योंकि वह दोनों ही ब्रह्म की चेतना में आत्मा है, वह आत्मा उनके द्वारा विराजमान है, आत्मा का स्वाभाविक गुण है, क्या उसके द्वारा जानना हमारा कर्त्तव्य है। जब पति और पत्नी दोनों विचार-विनिमय करते हैं, सुन्दर रूपों से विचार-विनिमय करते हैं, क्या ब्रह्म क्या है, आत्मा का लोक क्या है जब यह प्रश्नावली क्या है उनकी चला करती है, तो बेटा! क्यों न उनके द्वारा चेतना आयेगी।

## गृह आश्रम

आगे रहा यह विषय, क्या गृह आश्रम का पवित्रत्त्व है यह तो परमात्मा का सुन्दर नियम है, मानो उसको परमात्मा के नियम के आधार पर हमें परिपक्व बनाना है, क्योंकि यह तुम्हारा कर्त्तव्य है, कर्त्तव्यवाद की पवित्र वेदी पर आ करके, गृह आश्रम और एक ही विचार-विनिमय किया गया है। क्योंकि **ब्रह्म की चेतना के लिये बेटा! किसी आश्रम में भी बन्धन नहीं होता।** परन्तु देखो, वह नीचे से ऊर्ध्वागति हो जाती है क्योंकि प्रकृतिवाद में चला जाता है, और प्रकृतिवाद में जा करके अपनी महती परम्परा को मानव शान्त कर देता है। अपनी महती परम्परा को शान्त करके, बेटा! वह ऐसे ऐश्वर्य में लग जाता है क्या उसकी ऊर्ध्वागति बन जाती है, मस्तिष्क की गति ऊर्ध्वा नहीं होती ध्रुवा हो जाती है। ध्रुवा हो करके मुनिवरो! देखो, वह प्रकृति की गोद में ऐसे खिलवाड़ करता है, जैसे मुनिवरो! देखो, चन्द्रमा पूर्णिमा के दिवस देखो, समुद्र की

सोमलताओं में रमण करता रहता है। इसी प्रकार जैसे नाना प्रकार की सोमलताएँ, नाना प्रकार की वनस्पतियाँ बेटा! उसके आङ्गन में रमण करती रहती हैं। इसी प्रकार वह मानव प्रकृति की गोद में रमण करने लगता है, और रमण करता हुआ, अपनेपन को शान्त करता हुआ मानो देखो, वह प्रकृतिवाद में इस प्रकार रमण कर जाता है कि तृष्णा उसके साथ-साथ रमण करती है।

## तृष्णा

अब तृष्णा तो बलवती हो गई है, अब तृष्णा के लिये वह देखो, तृष्णा उत्पन्न हो जाती है। पुत्र कार्य करता है, तो पुत्र का कार्य सुन्दर प्रतीत नहीं होता, मानो वह तृष्णा में लग जाता है, और वह उच्चारण करता है, अपने-अपने क्रोध के द्वारा, कहीं हिंसा के द्वारा, क्या हे पुत्र! यह कार्य तुम सुन्दर नहीं कर रहे हो, मेरा यह अनुभव है। मानो देखो, वह तृष्णा विराजमान है, पुत्र अपने अनूकुल कार्य करना चाहता है। परन्तु वह जो वृद्धपन में तृष्णा जाग्रत हो गई है, वह कार्य को नहीं करने देती, पुत्र के द्वारा भी क्रोध आता है। अपमान की मात्र छा जाती है। बेटा! देखो, पिता में अपमान आता है, पुत्र में भी अपमान आता है, तो वहाँ घृणा का क्षेत्र बन जाता है। वहाँ एक मानो घृणा का क्षेत्र बन गया, तो बेटा! इसको क्या कहोंगे, तुम क्या इसको युवापन कहोंगे, बाल्यपन कहोंगे, यौगिकवाद कहोंगे? देखो, बेटा! उसको तो उच्चारण करना चाहते हो, मानो वह मानव मृत्यु के मुख में विराजमान है, मृत्यु से खिलवाड़ कर रहा है। क्योंकि तृष्णा जब तक जाग्रत रहती है, और तृष्णा की पूर्ति नहीं होती, जानो कि वह मृत्यु की गोद में रमण कर रहा है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर आज का हमारा वाक्य क्या कहता चला जा रहा है? जब तृष्णा, वृद्धपन कहाँ से उत्पन्न होता है? आज वृद्धपन किसे कहते हैं? अधिक उत्पन्न हो जाती है, तृष्णा का क्षेत्र बलवती हो जाता है, उस काल में बेटा! देखो, मानव वृद्धपन को प्राप्त हो जाता है।

## वेद की पवित्र विद्या को अपनाने की प्रेरणा

मेरे प्यारे! ऋषिवर आज का हमारा वाक्य क्या कहता चला जा रहा था, कि **वेद हमें क्या शिक्षा देता है, वेद हमें क्या सार्वभौम शिक्षा यह देता है,**

**कि मानव तू परमात्मा की गोद में चल, आनन्दपूर्वक वसुन्धरा की गोद में चल, वह तुझे अपने आनन्द में रमण करायेगी, अपने आनन्द में अपनी लोरियों में पान कराती रहेगी।** तुझे आज परमपद को प्राप्त करना है, तो मेरे प्यारे! ऋषिवर आज का हमारा यह वाक्य क्या कहता चला जा रहा है, कि वेद की जो परम पवित्र जो शिक्षा है वह सार्वभौम, मानव के लिये परणित होती चली जा रही है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मैं कोई अधिक चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, आज का हमारा यह वाक्य यह क्या कहता चला जा रहा है। आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः यह है कि हम प्रत्येक वस्तु का अनुसन्धान करते चले जायें, और देखो, हम अपने मन में यह विचार-विनिमय करते चले जायें, कि हमारा मानवत्व हमें क्या कह रहा है, क्योंकि मानव, अपने जीवन में उस वस्तु को धारण करता है। उसे किसी काल में यह प्रतीत होता है कि वास्तव में यह वेद सुन्दर है, क्योंकि वेद में, वाणी के विचारने से बेटा! वेदपाठी नहीं बन जाता। वेद के मन्त्रों को उच्चारण करने से भी वेदपाठी नहीं बन जाता है। आचार्य कहता है महर्षि वायु जी ने कहा है, क्या **वास्तव में वेद का पाठी वह होता है, जिसका जीवन वेद के अनूकुल होता है।** वेद के अनूकुल जिसका जीवन होगा, वह वेदपाठी होता है। बेटा! उसी के जीवन में वेद की प्रतिभा आती है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह आज का हमारा कि हमें वेद की पवित्र विद्या को स्वीकार कर लेना चाहिये, और उसके अनूकुल अपने जीवन को बनाना चाहिये, यह है आज का हमारा वाक्। मैं अधिक चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, कल मेरे प्यारे महानन्द जी अपने विचार प्रगट कर सकेंगे। क्योंकि आज इतना समय नहीं था, जो इनको प्रदान किया जा सकता।

मेरे प्यारे! ऋषिवर आज के हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह, कि हम अपने जीवन को उत्तम बनाने का प्रयास करें, और नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों की ये पवित्र विद्या है, वास्तव में यह ज्ञान और विज्ञान के द्वारा क्योंकि यह वेदों में निहित है, इस वेद मन्त्र को, वेद के विचार को, हमें अपने विचार में लाना है, हमें अपने जीवन में लाना है। वेद, बेटा! किसी आश्रम को यह नहीं कहता क्या तुम निठ्ल्ले बन जाओ। वेद तो यह कह रहा है, क्या तुम वास्तव में वेद ब्रह्मे

प्रकाशम् देखो, अपने जीवन को प्रकाश में ले चलो। प्रकाश के आङ्गन में चलों, प्रकाश के आङ्गन में चलोंगे, तो तुम्हारा जीवन सुन्दर बनेगा, अन्धकार में ध्रुवा गति बन जायेगी, तुम्हारे जीवन की क्योंकि वहाँ नष्ट-भ्रष्ट होती चली जायेगी। यह है बेटा! आज का हमारा वाक्य, अब मुझे समय मिलेगा, तो शेष चर्चायें कल प्रगट कर सकेंगे। आज का वाक्य यह समाप्त हो गया, कल मेरे प्यारे महानन्द जी अपने विचार प्रगट करेंगे, अपनी कटुता को त्यागते हुए।

मेरे प्यारे! ऋषिवर आज के हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह क्या हम प्रभु की चेतना में रमण करते रहें। कल मेरे प्यारे महानन्द जी का जो विषय है, वह केवल ज्ञान और विज्ञान के ऊपर लोकों की कुछ चर्चा इनकी इच्छा है प्रगट करने की। तो आज का यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज का वाक्य हमारा बहुत ही सूक्ष्मतम था, परन्तु इसमें रहस्य बहुत अधिक था इसीलिये हमें इसके ऊपर विचार-विनिमय करना है। अनुसन्धान की वेदी पर जाना है, यह है बेटा! आज का हमारा वाक्।

महर्षि महानन्द जी – गुरुदेव! वास्तव में वाक्य तो आपका बड़ा ही सुन्दर और प्रिय लगा, परन्तु समय बहुत सूक्ष्म।

पूज्यपाद-गुरूदेव – बेटा! कल समय मिलेगा तो कल अधिक से अधिक समय प्रदान किया जा सकेगा, आज का विषय तो केवल सूक्ष्म था। अब तुमने जाना कि इसमें कितना रहस्य था और ज्ञान की कितनी प्रतिभा थी।

महर्षि महानन्द जी – अच्छा भगवन्!

पूज्यपाद-गुरूदेव – मुनिवरो! आज का यह हमारा वाक्य अब समाप्त होने गया, अब कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चायें कल प्रगट करेंगे। **आज के वाक्यों का अभिप्रायः** क्या कि मानव के द्वारा वृद्धपन नहीं आना चाहिये। ज्ञान, प्रकाश आना चाहिये, ज्ञान स्वरूप मानव को प्रतिभावादी बनना चाहिये, जिससे मानव के द्वारा, मुनिवरो! देखो, वह सदैव परमात्मा के आङ्गन में, परमात्मा की चेतना में, चेतना को रमण करने में, अपने को सौभाग्यशाली

स्वीकार करता हुआ, ब्रह्म की चेतना को अपने में, अनुभव करता हुआ वेद के सुन्दर मार्ग को अपनाने का प्रयास करें। आज का वेद पाठ, आज का यह वाक्य समाप्त। कल मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ चन्द्रमा के सम्बन्ध में अपने वाक्य प्रगट करेंगे। आज का वाक्य यह समाप्त हो गया है, और लोकों की चर्चायें, विज्ञान की चर्चायें कल न प्रतीत यह अपने विचार कहाँ-कहाँ से ला करके प्रगट करेंगे। परन्तु देखो, जैसा भी समय होगा, अब वेद का पाठ होगा।

महर्षि महानन्द जी – अच्छा भगवन्! आज्ञा!

पूज्यपाद-गुरूदेव – आनन्द मङ्गलम् भवति!

ओ३म् ब्रह्म भविता माणं रुद्रा विशा गतं रयीणाम्।

ओ३म् भूषणा ऋषि वन्धना प्रायः गणो आ भा मनु गायन्ता मनु व्यापकं रथि चा याधि मन्धनाः।

ओ३म् ब्रह्म भगा मा व्यापकं रथश्चनाहाम्।

**दिनाँक** : 21 अगस्त, 1969
**स्थान** : आर्य समाज लोधी रोड,
जोर बाग, नई दिल्ली

## नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से प्राप्त नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ-साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   डी-33, पञ्चशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   के-3, लाजपत नगर-III, नई दिल्ली-110024 मो.न. : 9810887207

॥ ओ३म् ॥

# ऋषियों के उद्‌गार

1. जब यज्ञ कर्म होता है तो उपासना प्रभु से की जाती है, देवताओं से की जाती है।
2. भावनाओं से यज्ञ करना चाहिये, द्रव्यों से यज्ञ अधिक नहीं होता।
3. हृदय की प्रतिष्ठा ही मानव को बाध्य करती है, वही मानव को याज्ञिक बना देती है।
4. जितना मानव का हृदय पवित्र होगा, शुद्ध होगा उतनी ही मानव की प्रतिष्ठा ऊँची बनेगी।
5. विचारों की सुगन्धी महान् श्रेष्ठ होती है।
6. सबका उदय वहाँ होता है, जहाँ प्राणीमात्र के प्रति स्नेह होता है।
7. हम सदैव अपनी मानवीयता को उत्तम बनायें, याज्ञिक बनायें।
8. संसार में मानव नाना प्रकार के कर्म भोगों के लिये आता।
9. मानव जैसे विचारों का होता है जन्म-जन्मान्तरों से, उन्हीं विचारों में वह प्राणी परणित हो जाता है।
10. यज्ञों के ब्रह्मा बनने के लिये मानव का बड़ा सौभाग्य होता है।
11. द्रव्य होना चाहिये तो ऊँचे कर्मों के लिये, पवित्र कर्मों के लिये।
12. मानव को शुभ कर्म करने चाहिये, प्रत्येक शुभ कर्म यज्ञ है।
13. धर्म की रक्षा करने के लिये राष्ट्र का निर्माण होता है।
14. प्राणीमात्र का उदय जब होगा, जब अपने विचारों को सुन्दर बनाओंगे।
15. दीपावली – आज का यह दिवस है जब सबसे प्रथम कृषक ने भूमि के गर्भ में बीज की स्थाना की थी।
16. भगवान् मनु की साढ़े सात हजार प्रणालियों ने राज्य किया।
17. औषधि मानव का जीवन होती है।
18. चन्दन, अगर, तगर, सोनवत् और शंकबेला इन औषधियों का मस्तिष्क पर लेपन करने से मानव की बुद्धि नवीन रहती है।
19. अपने मस्तिष्क को सदैव ऊँचा बनाना चाहिये और औषधियों से युक्त बनाना चाहिये।

॥ ओ३म् ॥

# वियोग

श्रीमति अंगूरी देवी जी

परमपिता परमात्मा की सृष्टि का चक्र निरन्तर गतिशील है, उसमें प्राणिमात्र अपने संस्कार एवम् प्रारब्ध के वशीभूत अपने आवागमन के चक्र में सक्रिय बना रहता है जिससे कि इससे मुक्ति मिल जाये। उसी क्रम में एक पुण्य आत्मा, श्रीमति अंगूरी देवी धर्मदेवी श्री राजकुमार त्यागी, निवासी ग्राम महमदपुर आजमपुर, हापुड़, दिनाँक 30 अप्रैल 2022 को 86 वर्ष की अवस्था में अपने नश्वर शरीर को त्याग कर अपने लोकों को गमन कर गयीं। आप पिछले कई महीनों से अस्वस्थ चल रही थीं जिसके उत्तम उपचार के लिये उनके सुपुत्र श्री अरूण कुमार त्यागी जी ने अस्पताल व अपने घर राजनगर, गाजियाबाद में तन मन धन से अपने परिवार सहित संलग्न रहते हुये प्रयास किया परन्तु ईश्वर के विधान से समय का अभाव आ गया। श्री अरूण जी अपने जीवन में अत्यन्त एक प्रसन्नचित व उदार स्वभाव के हैं और उसका साकार रूप उन्होंने गाजियाबाद में एक वैदिक समाज बनाकर यज्ञ का प्रचार अपने सभी मित्रों व सम्बन्धियों के माध्यम से स्थापित किया हुआ है और यज्ञ कार्यों में सभी स्थान पर विशेष रूप से लाक्षागृह बरनावा व वैदिक अनुसन्धान समिति को सहयोग करने में अग्रणीय रहते हैं। ऐसी जननी के वियोग से परिवार व समाज को एक अत्यन्त अनुभवी, सहनशील व आदर्श आत्मा का सानिध्य हम सब से दूर चला गया है जोकि सभी की स्मृति में लम्बे समय तक बना रहेगा।

समिति परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि संतृप्त परिवार को ऐसी वेदना को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

**वैदिक अनुसन्धान समिति**

# दान-सूची

**वैदिक अनुसन्धान समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए निम्न याज्ञिक एवम् श्रद्धालु महानुभावों ने अपना सात्त्विक सहयोग प्रदान किया है–**

| | |
|---|---|
| 1. डॉ. सुचि चावला, आनन्द, गुजरात | 3000 रुपये |
| 2. श्री सचिन त्यागी, दिनकरपुर | 15300 रुपये |
| 3. श्री शिवराज एवम् श्री दुष्यन्त त्यागी, दिनकरपुर | 500 रुपये |
| 4. श्री दिव्यकान्त त्यागी, दिनकरपुर | 100 रुपये |
| 5. श्री राजेन्द्र शर्मा, रासना, मेरठ | 1000 रुपये |
| 6. श्री कालूराम त्यागी और गुरुवचन शास्त्री, दिनकरपुर, मुजफ्फरनगर | 1100 रुपये |
| 7. श्री यादराम सुपुत्र श्री बलजीत, ग्राम भामौरी, मेरठ | 100 रुपये |
| 8. श्रीमति ऊषा त्यागी, बुराड़ी, दिल्ली | 100 रुपये |
| 9. श्री शिवम् सुपुत्र श्री बिजेन्द्र, फुगाना, मुजफ्फरनगर | 200 रुपये |
| 10. श्री धर्मवीर सैनी जी, काकड़ा, मुजफ्फरनगर | 250 रुपये |
| 11. श्री समरपाल सैनी, काकड़ा, मुजफ्फरनगर | 150 रुपये |
| 12. श्री जयपाल सिंह जी, शाहदरा, दिल्ली | 500 रुपये |
| 13. श्री सर्वेश त्यागी, हापुड़ | 100 रुपये |
| 14. श्री कमल सिंह, मोदीनगर | 201 रुपये |
| 15. मि. पूजा सैनी, काकड़ा, मुजफ्फरनगर | 1100 रुपये |
| 16. श्री प्रदीप, फफुण्डा | 200 रुपये |
| 17. श्री कैलाश पाल, शाहदरा, दिल्ली | 1000 रुपये |
| 18. श्री अमित त्यागी, गाजियाबाद | 500 रुपये |
| 19. श्री संजय त्यागी, बरनावा, बागपत | 100 रुपये |
| 20. श्री खेमराज जी, नंगला पाती, मेरठ | 100 रुपये |
| 21. श्रीमति जसवन्ती देवी जी, रूड़की | 200 रुपये |
| 22. श्रीमति कुन्ती त्यागी, रैदरा, मेरठ | 51 रुपये |
| 23. सुश्री नीरू अबरोल, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 3100 रुपये |
| 24. श्री सी.एम. कक्कड़, कनाड़ा | 2000 रुपये |
| 25. श्रीमति रेणु तुली, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 12000 रुपये |
| 26. श्री संजीव त्यागी, फरीदाबाद, हरियाणा | 12000 रुपये |
| 27. श्री करन तुली, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 6012 रुपये |
| 28. श्रीमति रूचिका भगत, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 6012 रुपये |

| | |
|---|---|
| 29. श्री अरूण तुली, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 6012 रुपये |
| 30. श्रीमति सुखमनी ग्रेवाल, के-3, लाजपत नगर-III, दिल्ली | 6012 रुपये |
| 31. श्री जयप्रकाश मीना, नई दिल्ली | 11000 रुपये |
| 32. श्री अनुराग पाल, दौराला | 501 रुपये |
| 33. श्री यशपाल राठी, सैनपुर | 500 रुपये |
| 34. श्री सतपाल सिंह, सलीमाबाद | 100 रुपये |
| 35. मास्टर शिवराज, दुष्यन्त त्यागी, दिनकरपुर | 500 रुपये |
| 36. श्री सुबोध शर्मा, गढ़ी, नई दिल्ली | 1100 रुपये |
| 37. श्री गौरव त्यागी, सिहानी | 1100 रुपये |
| 38. श्री सौरव त्यागी, सिहानी | 1100 रुपये |
| 39. गुप्त दान | 1100 रुपये |
| 40. श्री महीपाल, तलहैटा | 500 रुपये |
| 41. श्री भगवान सिंह, नंगला पासी, कानकादहैदा, मेरठ | 100 रुपये |
| 42. श्री प्रताप सिंह, फफुण्डा, मेरठ | 450 रुपये |
| 43. श्रीमति सत्यवती त्यागी, सतादी, मुजफ्फरनगर | 5000 रुपये |
| 44. नेहा त्यागी, दिल्ली | 501 रुपये |
| 45. श्रीमति दीपा त्यागी, मेरठ | 1100 रुपये |
| 46. श्री बलवीर सिंह, बरनावा | 1100 रुपये |
| 47. श्री नरेश त्यागी, बरनावा | 1100 रुपये |
| 48. सुश्री श्रुति त्यागी, डी-33, पञ्चशील एन्क्लेव, दिल्ली | 11000 रुपये |
| 49. श्री कृष्ण कुमार त्यागी, बरनावा | 2500 रुपये |
| 50. श्री ओमदत्त शर्मा, कन्नौजा | 2100 रुपये |
| 51. श्री अथर्व त्यागी, वशुन्धरा, गाजियाबाद | 2100 रुपये |
| 52. श्री राजवीर सिंह, बवाली | 2000 रुपये |
| 53. श्री वीरसिंह, मुजफ्फरनगर | 1500 रुपये |
| 54. श्री राजेन्द्र शर्मा, मिर्जापुर, रासना | 1000 रुपये |
| 55. श्री हिमनेश त्यागी, माछरा, मेरठ | 501 रुपये |
| 56. श्री धर्मवीर सैनी, काकड़ा, मुजफ्फरनगर | 500 रुपये |
| 57. श्री कमलेश, पाड़व नगर, दिल्ली | 500 रुपये |
| 58. श्री धर्मपाल, काकड़ा, मुजफ्फरनगर | 500 रुपये |
| 59. श्री कैलाश पाल, दिल्ली | 500 रुपये |
| 60. श्री प्रेमपाल सिंह राघव, सैनिक विहार, मेरठ | 251 रुपये |
| 61. मि. संजय, छतरपुर, दिल्ली | 250 रुपये |

| | |
|---|---|
| 62. श्री शोभा शर्मा, रूड़की | 250 रुपये |
| 63. श्री भगीरथ शर्मा जी, दिल्ली | 250 रुपये |
| 64. श्री गगन खुराना, दिल्ली | 201 रुपये |
| 65. गुप्त दान | 201 रुपये |
| 66. श्रीमति कृष्णवी, पाड़व नगर, दिल्ली | 200 रुपये |
| 67. श्री सुधीर कामभोज, आर.के. पुरम्, दिल्ली | 200 रुपये |
| 68. श्री अमित कुमार, सुहादी | 200 रुपये |
| 69. श्री शिवम मलिक, फुगाना | 200 रुपये |
| 70. गुप्त दान | 106 रुपये |
| 71. श्री राजेन्द्र प्रसाद, बरनावा | 101 रुपये |
| 72. श्री किशनपाल सिंह, मोदीनगर | 101 रुपये |
| 73. श्री धर्मवीर राणा, दाहा | 101 रुपये |
| 74. श्री प्रमोद त्यागी, मोदीनगर | 100 रुपये |
| 75. श्रीमति जघन्या, बरनावा | 101 रुपये |
| 76. श्रीमति कुन्ती त्यागी, रैदरा | 100 रुपये |
| 77. श्री विक्रम सिंह, बड़ौत | 100 रुपये |
| 78. श्री कनवार पाल, मोटर, दुराना | 100 रुपये |
| 79. माता सुखबीरी, पराई | 100 रुपये |
| 80. श्रीमति मेघा, बिनौली | 100 रुपये |
| 81. श्री प्रकाश बागरनप, लोनी | 100 रुपये |
| 82. श्री यश, बरनावा | 51 रुपये |
| 83. श्री बलेश्वर, गलहैता, बागपत | 50 रुपये |
| 84. श्री मानू पुण्डीर, धूमगढ़, सहारनपुर | 50 रुपये |
| 85. श्री कन्हैया राणा और मूर्ति राणा | 50 रुपये |
| 86. श्रीमति रत्ना, मानाकुटी | 25 रुपये |

सभी उपरोक्त दान दाताओं का समिति हृदय से आभार प्रकट करती है जिन्होंने पूज्यपाद-गुरुदेव की अमृतवर्षा को निरन्तर प्रवाहित होने के लिए अत्यन्त उदारता और समर्पण भाव से समिति का सहयोग किया है जिससे कि जन-कल्याण में पूज्यपाद-गुरुदेव की अमृतवर्षा निरन्तर समाज का उत्थान करने में प्रकाशमान बनी रहें। और सभी श्रद्धालुओं को परिवार सहित जीवन में सुख, शान्ति व सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

## योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

| | | |
|---|---|---|
| 1. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 1) | 110.00 |
| *2. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 2) | 110.00 |
| *3. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 3) | 120.00 |
| *4. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 4) | 120.00 |
| 5. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 5) | 160.00 |
| 6. | Yogic Wisdom of Ancient Rishis | 100.00 |
| 7. | वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान | 40.00 |
| 8. | आत्म-लोक | 45.00 |
| *9. | धर्म का मर्म | 50.00 |
| 10. | शंका-निवारण | 40.00 |
| 11. | यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व | 50.00 |
| 12. | आत्मा व योग-साधना | 40.00 |
| *13. | देवपूजा | 50.00 |
| 14. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1) | 150.00 |
| 15. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2) | 150.00 |
| 16. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3) | 140.00 |
| 17. | रामायण के रहस्य | 50.00 |
| 18. | यज्ञ एवं औषधि विज्ञान | 50.00 |
| 19. | महाभारत के रहस्य | 35.00 |
| 20. | अलङ्कार-व्याख्या | 45.00 |
| 21. | रावण-इतिहास | 65.00 |
| 22. | महाराजा-रघु का याग | 35.00 |
| 23. | वनस्पति से दीर्घ-आयु | 40.00 |
| 24. | मोक्ष प्राप्ति का मार्ग | 40.00 |
| 25. | चित्त की वृत्तियों का निरोध | 50.00 |
| 26. | आत्मा, प्राण और योग | 40.00 |
| 27. | पञ्च-महायज्ञ | 45.00 |
| 28. | अश्वमेध-याग और चन्द्रसूक्त | 50.00 |
| 29. | याग-मन्जूषा | 45.00 |
| 30. | आत्म-दर्शन | 35.00 |
| 31. | पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन | 40.00 |
| 32. | याग और तपस्या | 70.00 |
| 33. | यागमयी-साधना | 45.00 |
| 34. | यागमयी-सृष्टि | 40.00 |
| 35. | याग-चयन | 50.00 |
| 36. | दिव्य-रामकथा | 150.00 |
| 37. | ज्ञान-कर्म-उपासना | 50.00 |
| 38. | दिव्य-ज्ञान | 45.00 |
| 39. | महाभारत एक दिव्य दृष्टि | 140.00 |
| 40. | महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग | 55.00 |
| 41. | आत्म-उत्थान | 45.00 |
| *42. | तप का महत्त्व | 50.00 |
| 43. | अध्यात्मवाद | 45.00 |
| 44. | ब्रह्मविज्ञान | 45.00 |
| 45. | वैदिक-प्रभा | 40.00 |
| 46. | प्रकाश की ओर | 40.00 |
| 47. | कर्तव्य में राष्ट्र | 45.00 |
| 48. | वैदिक-विज्ञान | 40.00 |
| 49. | धर्म से जीवन | 40.00 |
| 50. | आत्मा का भोजन | 45.00 |
| 51. | साधना | 40.00 |
| 52. | त्रेताकालीन-विज्ञान | 45.00 |
| 53. | यज्ञोमयी-विष्णु | 45.00 |
| 54. | यौगिक प्रवचन माला भाग-6 | 110.00 |
| 55. | स्वर्ग का मार्ग | 50.00 |
| *56. | यौगिक प्रवचन माला भाग-7 | 110.00 |
| 57. | माता मदालसा | 60.00 |
| *58. | यौगिक प्रवचन माला भाग-8 | 110.00 |
| *59. | यौगिक प्रवचन माला भाग-9 | 110.00 |
| 60. | यौगिक प्रवचन माला भाग-10 | 160.00 |
| 61. | याग एक सर्वाङ्ग पूजा | 110.00 |
| 62. | यौगिक प्रवचन माला भाग-11 | 150.00 |
| *63. | यौगिक प्रवचन माला भाग-12 | 110.00 |
| 64. | मानव कल्याण की चर्चाएँ | 60.00 |
| 65. | प्रभु-दर्शन | 60.00 |
| *66. | यौगिक प्रवचन माला भाग-13 | 110.00 |
| *67. | समाज उत्थान का मार्ग | 60.00 |
| *68. | यौगिक प्रवचन माला भाग-14 | 110.00 |
| *69. | ब्रह्म की ओर | 60.00 |
| *70. | ईश्वर मिलन | 60.00 |
| *71. | यौगिक प्रवचन माला भाग-15 | 110.00 |
| *72. | यौगिक प्रवचन माला भाग-16 | 110.00 |
| *73. | नैतिक शिक्षा | 60.00 |
| *74. | यौगिक प्रवचन माला भाग-17 | 110.00 |
| *75. | आत्मिक ज्ञान | 60.00 |
| *76. | यौगिक प्रवचन माला भाग-18 | 120.00 |
| *77. | यज्ञ विज्ञान | 100.00 |
| *78. | यौगिक प्रवचन माला भाग-19 | 120.00 |
| 79. | मानव दर्शन | 150.00 |
| 80. | यौगिक प्रवचन माला भाग-20 | 160.00 |
| | पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम् कर्मभूमि लाक्षागृह | 10.00 |

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

# मासिक सहयोग

| | |
|---|---|
| सु. कुमारी नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली– स्मृति–श्रीमति शान्ति अबरोल व श्री देवराज अबरोल | 1001 रुपये |
| श्रीमति रेणु तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली– स्मृति–श्री रत्न तुली | 1001 रुपये |
| श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा | 1000 रुपये |
| श्री ज्ञानेश द्विवेदी | 1000 रुपये |
| श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा | 501 रुपये |
| श्री कर्ण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली | 501 रुपये |
| श्रीमती रुचिका तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली | 501 रुपये |
| श्री अरुण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली | 501 रुपये |
| श्रीमती सुखमणी तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली | 501 रुपये |
| श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश | 500 रुपये |
| श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद | 500 रुपये |
| मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा | 251 रुपये |
| मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा | 251 रुपये |
| डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात | 250 रुपये |
| मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश | 101 रुपये |
| मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली | 101 रुपये |
| कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश | 101 रुपये |
| मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली | 101 रुपये |
| मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका | 101 रुपये |
| कुमारी प्रीक्षा त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका | 101 रुपये |
| मास्टर कबीर, कुमारी रिधानी मल्हौत्रा, ब्रज विहार, गाजियाबाद | 101 रुपये |
| कुमारी सृष्टा, मास्टर अव्युक्त, पश्चिम एन्कलेव, नई दिल्ली | 101 रुपये |

## मासिक सहयोग का आह्वान

आप सभी से समिति विनम्र भाव से प्रार्थना करती है कि मासिक सहयोग की राशि समय पर प्रेषित करने का सहयोग करें जिससे प्रकाशन निरन्तर ऊर्ध्वागति को प्राप्त होता रहें। **वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

**योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद-गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज**

# उद्‌बोधन

ब्रह्म की चेतना ही संसार में अपना कार्य कर रही है। ब्रह्मविद्या ही मानव को ऊँचा बनाती है, और राष्ट्र में धर्म को ला देती है। इसलिए आज हमें ब्रह्मविद्या की आवश्यकता है। जब प्रत्येक मानव धर्मनिष्ठ और ब्रह्मनिष्ठ होता है तो उसी काल में उसकी विचारधारा में एक महानता का दिग्दर्शन और उसके हृदय में महानता की प्रतिष्ठा हो जाती है। जिससे वह महान् कहलाता है। मानव की जो वाणी होती है उसका सम्बन्ध अग्नि से होता है। इसलिए हमारे यहाँ किसी-किसी ऋषि ने अग्नि को भी उद्‌गाता कहा है। आज जो हम प्रभु की याचना कर रहे हैं। हे प्रभु! तू स्वयं यज्ञ है। तेरी महानता इन वेदों में परिणत हो रही है। वेद की जो अनुपम धारा है वही प्रकाश, मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाता है। क्योंकि वेद की जो अनुपमता है, ब्रह्मविद्या है, महानता है, उसमें उसका एक-एक शब्द पक्षपात से रहित है। उसी को तो ब्रह्मविद्या कहते हैं। क्योंकि परमात्मा में रूढ़ि नहीं होती, इसलिए वेद में भी रूढ़ि नहीं है। इसलिए वेद के अनुसार मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहिए। जो मानव रूढ़ियों में परणित हो जाते हैं, उनके जीवन में विनाश हो जाता है। उनका जो मानसिक सँकल्प होता है, उसकी धाराओं में भिन्नता आ जाती है।

**पूज्यपाद-गुरुदेव**

**वर्ष 50 : अंक : 587**
**मई 2022**

**मूल्यः**
**पन्द्रह रुपये**

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-5-2022
**Published on 5th day of the same month**

**वर्ष 50 : अंक : 587**
**मई 2022**

**मूल्यः**
**पन्द्रह रुपये**

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2021-2023
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-5-2022
**Published on 5th day of the same month**